सचित्र दिल्ली

दिल्ली-इन्द्रप्रस्थ

"Empires and nations flourish and decay
By turns command in their turns obey."

लेखक

श्रीयुत दत्तात्रेय बलवन्त पारसनीस

अनुवादक

श्रीयुत रामचन्द्र रघुनाथ सर्वटे

प्रकाशक

तरुण-भारत-ग्रन्थावली-कार्यालय,
दारागंज, प्रयाग

सं० १९८५ वि०

द्वितीयावृत्ति] [मूल्य ।।।) आने

मुद्रक—पं० रामप्रसाद वाजपेयी,
कृष्णा-प्रेस,
हिवेट रोड, प्रयाग।

निवेदन

तरुण-भारत-ग्रन्थावली की यह छठवीं संख्या हिन्दी-प्रेमियों की सेवा में सादर उपस्थित की जाती है। यह पुस्तक मराठी के प्रसिद्ध ऐतिहासिक लेखक रावबहादुर श्रीयुत दत्तात्रेय बलवन्त पारसनीस की लिखी हुई पुस्तक का अनुवाद है। पारसनीस महाशय ने मूल पुस्तक स्वतंत्र रीति से तो लिखी ही है; किन्तु साथ ही साथ अनेक इतिहास-अन्वेषक देशी तथा विदेशी विद्वानों की सहायता भी ली है, अतएव पुस्तक, छोटी होने पर भी, साहित्य की दृष्टि से बहुत उपयोगी हुई है।

यह हमारी भारत-भूमि पवित्र और ऐतिहासिक स्थानों का भांडार है। जिस प्रकार धार्मिक तीर्थस्थलों और प्राकृतिक रमणीय स्थानों की यहाँ कमी नहीं है, उसी प्रकार ऐतिहासिक और राष्ट्रीय दृष्टि से भी हमारे देश के अनेक नगर बहुत ही महत्व के हैं। उन सब नगरों में "दिल्ली-इन्द्रप्रस्थ" का दर्जा बहुत ही बढ़ा हुआ है। इस नगर ने जितने राजकीय परिवर्तन देखे हैं, उतने शायद किसी नगर ने इस पृथ्वीतल पर न देखे हों। और इसी लिए इस नगरी का इतिहास हमारे लिये बहुत ही मनोरंजक और बोधप्रद है—यही नहीं; किन्तु एक भारतीय सन्तान के लिए यह अत्यन्त विचारणीय और गम्भीर विषय है! भारतीय साम्राज्य

अनुक्रमणिका

प्रकरण

दिल्ली-इन्द्रप्रस्थ

पहला प्रकरण

प्राचीन और अर्वाचीन वृत्तान्त

ऐसा कौन भारतवासी होगा, जिसने कभी दिल्ली शहरका नाम न सुना हो? सिर्फ भारतवर्षमें ही नहीं, किन्तु समस्त संसार में जितने इतिहास-प्रसिद्ध नगर हैं, उन सबमें हमारी दिल्लीका दर्जा बहुत ऊँचा है। किसी जमानेमें यह नगर राज-वैभव, कला-कौशल और विद्यावृद्धि आदि बातोंमें अग्रसर था। यहाँ पर अनेकों राज्यक्रान्तियाँ हो गईं; और कालचक्रकी विचित्र गतिका प्रभाव जितना यहाँ दृष्टिगोचर हुआ है, उतना अन्यत्र शायद ही हुआ हो। वैसे तो बाबिलोन अथवा बालबेक, पालमिरा अथवा पेर्सिपालिस, अथेन्स, कार्थेज, अथवा रोम, इत्यादि शहर इतिहास में अनेक राज्यविप्लवों तथा उथला-पथलोंके अग्रस्थान अथवा मानवी नाटककी प्रसिद्ध रंगशालाएँ हैं—तो भी दिल्लीकी कीर्ति सबमें अद्भुत है। बाबिलोनकी चमत्कार-पूरित लहरानेवाली पुष्प-वाटिकाएँ, सालोमन नगरीकी चित्ताकर्षक सुन्दरता, पेर्सिपालिस नगरका अपार प्राचीन वैभव और कार्थेज नगरीका लोकोत्तर

ऐश्वर्य, इत्यादि सब बातें आज लुप्तप्राय हो गई हैं। यदि हम रोमकपत्तन के साम्राज्यवैभवको व्यक्त करनेवाले प्राचीन शेष चिन्होंको अपने ध्यानसे अलग कर दें, तो बड़े गर्वसे यही कहना पड़ेगा कि, संसारमें मूर्तिमन्त प्राचीन और अर्वाचीन इतिहास बतलानेवाला, नगर सिर्फ दिल्ली ही है। तीन हजार वर्ष तक कालके चक्रकी अनन्त लीलाओंको देखकर, फिर भी सब लोगोंके अन्तःकरणोंको अपनी ओर खींच लेनेकी सामर्थ्य इस नगरीमें सचमुच बड़ी विलक्षण है। पांडव, कौरव, अशोक, जैन, विक्रम, चौहान, पठान, मुगल और मराठे आदि सबको सार्वभौमिकता प्राप्त करा देनेका मान इसी नगरने प्राप्त किया था; और उन सबको अपने पदोंमें लीन कर छोड़ा था। केवल यही नहीं, किन्तु सारी पृथ्वीपर अपनी राजसत्ता जमानेवाले अंग्रेज लोगोंको भी इस नगरने मोहित कर लिया है। पौराणिक कालके इन्द्रप्रस्थको मुसलमानी राजत्वकालमें जितनी महत्ता प्राप्त थी, उतनी ही महत्ता उसे मराठोंके शासन-कालमें प्राप्त थी; और ब्रिटिश शासन-कालमें भी यह नगर उतना ही महत्त्वशाली बना हुआ है। पाण्डवोंका राजसूय यज्ञ, मयासुरकी अपूर्व मय सभा, शाहजहाँ बादशाहके बहुमूल्य और रत्नजटित मयूर सिंहासनके सामनेवाला आम दरबार, चक्रवर्तिनी देवी विक्टोरियाके 'कैसरे हिन्द' पदका बृहद् दरबार अथवा भारतके वाइसराय लार्ड कर्जनके द्वारा किया गया राजाधिराज सप्तम एडवर्ड बादशाहके राज्यारोहणका दरबार, चक्रवर्ती सम्राट् पंचम जार्जके राज्यारोहणका अनुपम दरबार, आदिके समान दुर्लभ और प्रेक्षणीय महोत्सव इस नगरमें हुए हैं, ऐसे विशिष्ट स्थलका वर्णन कौन नहीं सुनना चाहेगा!

दिल्ली शहरके दो प्राचीन नाम, हस्तिनापुर और इन्द्रप्रस्थ, और एक अर्वाचीन नाम, शाहजहानाबाद, प्रसिद्ध हैं। साधारण-तया प्राचीन ग्रन्थों और कागजोंमें दिल्लीके लिए उपर्युक्त नामोंका ही प्रयोग किया जाता है। परन्तु आज-कल ये स्थान भिन्न भिन्न हैं; और उनमेंसे कुछका 'नई दिल्ली' और कुछका 'पुरानी दिल्ली' में समावेश होता है। इन्द्रप्रस्थ नामका स्थान 'पुराने क़िले' के नामसे प्रसिद्ध है। हस्तिनापुर नामक स्थान दिल्लीसे अलग है। और शाहजहानाबाद दिल्ली शहर में शामिल है। कहते हैं कि, पहले दिल्ली बड़ा विस्तीर्ण नगर था। उसकी परिधि ४५ मीलकी थी। इस नगरको इन्द्रप्रस्थका नाम अत्यन्त प्राचीन कालसे मिला है। जनरल कनिंगहमका यह अनुमान है कि, ईस्वी सदीके पन्द्रह सौ वर्ष पहले उत्तरसे आनेवाले आर्य लोगोंने यमुना नदीके सुन्दर प्रवाहको देखकर उसके तटपर इस नगरकी रचना की होगी। महाभारतसे यह मालूम होता है कि, धर्मराज युधिष्ठिरने इस नगरकी सृष्टि की है। इससे यह अनुमान होता है कि, इस नगर की सृष्टि आजसे ७००० वर्ष पहले हुई होगी। आजकलके ज्योतिष-शास्त्र-विशारदोंके मतानुसार भारतीय युद्धका समय आजसे ७११४ वर्ष पहलेका है। इससे स्पष्ट है कि, इस कालके पहलेसे ही इस नगरका अस्तित्व रहा होगा। कुछ लोगोंका यह मत है कि, जिस समय इन्द्रप्रस्थ नामक नगरी प्रस्थापित की गई थी, उस समय यमुनाका प्रवाह उसके वर्तमान प्रवाहसे भिन्न था। अस्तु; जब कि महाभारतके पहलेकी देश-दशाका विचार करनेके लिए कोई अच्छा साधन उपलब्ध नहीं है, तब फिर यह माननेमें कोई आपत्ति

नहीं है कि, इन्द्रप्रस्थकी नगरी पांडवोंके कालसे ही अस्तित्व
आई।

इन्द्रप्रस्थका राज्य पांडवोंके वंशमें तीस पीढ़ियों तक, या
लगभग १८५४ वर्ष रहा।* इसके बाद, तीसवीं पीढ़ीके राज
क्षेमक अथवा लखमीदेवके प्रधान वीरसेन अथवा विसर्वने इ
राज्यको छीन लिया। उसने तथा उसके वंशजोंने ३४७ वर्ष त
राज्य किया। इसके बाद, उसके वंशके अन्तिम राजा पृथ्वीपाल
नरहरिनाथ नामक उसके दीवानने यह राज्य छीन लिया। इसक
राजवंश गौतमके नामसे प्रसिद्ध हुआ। इस वंशके राजाओं
हाथमें यह राज्य ३८६ साल तक रहा। इसके बाद मयूरोंका राज
हुआ। इस वंशके अन्तिम राजाको मारकर शकादित्यने राज
छीन लिया। इसके बाद राजपूत लोग राजा हुए। इस प्रका
अनेक वर्षों तक इन्द्रप्रस्थ हिन्दू राजाओंके हाथमें रहा। इस
पश्चात् क्रमशः पठान, मुगल, मराठों और अन्तमें अंग्रेज लोगों
हाथमें यहांकी सत्ता चली गई। जनरल कनिंगहमका मत है कि
इन्द्रप्रस्थको दिल्ली अथवा दिल्लीपुर नाम ईस्वी सन्के एक शताब्
पहले प्राप्त हुआ होगा। उन्होंने मुसलमान इतिहास-लेख
फरिस्ताके आधार पर यह प्रतिपादन किया है कि, पहलेका दिल्
शहर आजकलकी दिल्लीसे ५ मीलकी दूरी पर, जमुना नदीके त
पर, बसा था; और मयूर वंशके दिलू नामके राजासे उसे 'दिल्ल

* दिल्लीके राजाओं की सम्पूर्ण नामावली इस पुस्तक के अंत में परि
शिष्टरूपसे दी गई है। उसमें पांडवोंसे लेकर मुगल बादशाहोंके अं
तक समस्त राजाओंके नाम और उनके शासनकी वर्षगणना दी हुई है।

नाम प्राप्त हुआ। परन्तु इससे भी अधिक विश्वसनीय वृत्तान्त ईस्वी सन्‌की तीसरी अथवा चौथी शताब्दीसे प्राप्त हो सकता है। दिल्लीमें एक प्रख्यात लोहस्तंभ है। उसपर एक संस्कृत लेख खुदा है। उससे जान पड़ता है कि, धव नामक राजाने अपना प्रताप संसारमें प्रकट करनेके लिए यह लोहस्तम्भ खड़ा किया। जनरल कनिंगहमके मतसे इस लोहस्तम्भका समय सन् ३१९ ईसवी है। उन्होंने यह अनुमान निकाला है कि, इस समयमें चूँकि कन्नौजका गुप्त नामक राजघराना सत्ताहीन हुआ; अतएव उस समय उपर्युक्त राजाने अपने पराक्रमको व्यक्त करके विजयानन्दसे इस लोहस्तम्भको खड़ा किया होगा। परन्तु फिर पीछेसे इस लोहस्तम्भके संस्कृत लेखका आधार भी रद्द होगया; और परम्परासे चली आई हुई दन्तकथाओंने आठवीं शताब्दीके तुम्वर अथवा तोमर घरानेके प्रस्थापक राजा बिल्हणदेव उर्फ अनंगपालको इस लोहस्तम्भका जनकत्व दिया। दिल्लीमें इस विषयकी अनेक दन्तकथाएं प्रचलित हैं। उनमें एक दन्तकथा इस प्रकार है:—"एक दिन किसी ब्राह्मणने राजा से आकर कहा कि, आपने जो यह स्तम्भ स्थापित किया है उसका सिरा धरती के भीतर शेषनागजी के मस्तक में जा लगा है; और आपका स्तम्भ खूब दृढ़ हो गया है—अतएव आपका राज्य भी इसी प्रकार दृढ़ रहेगा। जब तक यह स्तम्भ यहाँ रहेगा तब तक आप का राज्य अबाधित रहेगा; और आपही के वंशमें बना रहेगा।" राजा को ब्राह्मण का कथन सच मालूम हुआ; और उसके कथन की परीक्षा लेने के लिए उसने उस लोहस्तम्भ को उखाड़कर देखने की आज्ञा दी। जब वह स्तम्भ उखाड़कर देखा गया तब उसके निचले

सिरे में सचमुच ही खून लगा हुआ दिखाई दिया; क्योंकि स्तम्भ शेषनाग के मस्तक में घुस गया था। यह देखकर राजा को ब्राह्मण के कथन की सत्यता पर विश्वास हो गया। राजा ने उस स्तम्भ को फिर गाड़ने की कोशिश की; परन्तु वह पहले के समान दृढ़ता-पूर्वक नहीं गड़ा; किन्तु कुछ ढीला रह गया। वह लोहे की लाट चूंकि 'ढीली' रही; और इसी लिए उस स्थान को "ढिल्ली" और "दिल्ली" कहने लगे। इसके सिवा और भी कई किंवदन्तियाँ प्रचलित हैं। टालेमी के ग्रन्थ में "दैदल" और "इन्द्रवर" नाम के जिन दो पास-पासवाले शहरों का उल्लेख किया गया है, उनसे "दिल्ली" और "इन्द्रप्रस्थ" के नामों की बहुत कुछ समानता है। इसलिए स्पष्ट है कि ये दो नाम बहुत प्राचीन हैं। कई एक प्राक्कालीन इतिहास-अन्वेषकों का मत है कि, दिलू अथवा धिलू नाम के राजा से ही "दिल्ली" नाम पड़ा है; और विक्रमीय शताब्दी के पहले, यानी ईस्वी सन् से ५७ वर्ष पहले के लगभग इस नाम का प्रचार हुआ। विक्रम राजा के विषय में हिन्दी भाषा में जो कवित्त प्रचलित हैं उनमें यह उल्लेख है कि, "दिल्लीपति कह्यो"—यानी विक्रम को दिल्लीपति कहने लगे। सारांश यह है कि, इस शहर का "दिल्ली" नाम बहुत पुराना है।

सन् ७३६ ईस्वी से दिल्लीके राजाओंका विश्वसनीय हाल मालूम होता है। अनंगपाल तुम्बर वंशका मूल संस्थापक है। सन् ७३६ ईस्वी में इसका राज्याभिषेक हुआ। उसने पहले पहल दिल्लीमें राज्य किया। इसके बाद उसके वंशज कन्नौजमें गये। वहाँ से उन्हें राठोड़ोंके मूलपुरुष चन्द्रदेवने भगा दिया। इसके बाद दूसरा अनंगपाल दिल्ली में आया; और वहाँ उसने अपनी

राजधानी बनाई। वहाँ उसने नया शहर बसाया; और उसके आसपास एक भारी कोट बनवाया। कुतुबमीनार के आसपास के हिस्से में प्राचीन इमारतोंके जो चिन्ह देख पड़ते हैं वे राजा अनंगपालकी राजधानीके चिन्ह माने जाते हैं। अनंगपालके दिल्लीमें राज्य करने का समय उपर्युक्त प्राचीन लोहस्तम्भ पर इस प्रकार दिया है—"संवत् दिहली ११०९ अंगपाल वही।" इससे यह सिद्ध होता है कि, सन् १०५२ ईस्वीमें राजा अनंगपाल दिल्लीमें राज्य करता था। इसके एक शताब्दी के बाद, यानी तुम्बर घरानेके अन्तिम राजा—तीसरे अनंगपाल—के शासनकाल में, अजमेरके राजा विशालदेव चौहानने दिल्ली जीत ली। इस विजयी राजाने अनंगपाल का सर्वथा नाश नहीं किया; किन्तु उसे एक छोटासा राज्य देकर अपना माण्डलिक बना लिया; और उसके घरानेसे बेटी-व्यवहार किया। इन दो घरानोंके विवाह-सम्बन्धका फल पृथ्वीराज चौहान है। पृथ्वीराज भारतकी हिन्दू स्वतन्त्रताका अभिमानी तथा उस की रक्षा के लिए लड़नेवाला अन्तिम राजा है। उसने दिल्ली में "रायपिथौरा" नामका एक क़िला बनवाया, और अनंगपालके बनवाये हुए कोट के आसपास एक और भारी कोट बनवाया, तथा ऐसा प्रबन्ध कर दिया कि, जिससे कोई भी शत्रु दिल्ली शहर को न जीत सके। परन्तु भारतवर्षकी स्वतंत्रता पर क्रूर कालकी वक्र दृष्टि हुई; और पृथ्वीराजका अजेय किला एवं सुदृढ़ कोट कुछ भी काम न दे सका; तथा भारतवर्षकी स्वतंत्रता पृथ्वीराजके शासनकाल में ही रसातल को पहुँच गई! सन् ११९१ ईस्वीमें शहाबुद्दीन मुहम्मद गोरीने हिन्दुस्तानपर अपना पहला आक्रमण किया। पृथ्वीराजने

बड़ी वीरताके साथ उसका सामना किया। यहाँ तक कि, पृथ्वीरा
ने उसे थानेश्वरकी लड़ाईमें अच्छी तरह हरा दिया। पृथ्वीराज
शहाबुद्दीन की सेनाका ४० मील तक पीछा किया, और उस
नाकमें दम कर दिया। परन्तु दो सालके वाद यह मुसलमा
आफ़त फिर आई; और उसने पृथ्वीराजका पराभव करके उन
वध किया; और दिल्लीका साम्राज्य अपने अधीन कर लिया !

इस प्रकार मुहम्मद गोरीके सेनापति कुतुबुद्दीनने दिल्लीको जीत
और वहाँ मुसलमानी सत्ताका हरा झंडा खड़ा कर दिया। स
१२०६ ईस्वीमें जब मुहम्मद गोरीका देहान्त हुआ, कुतुबुद्दीन स्व
दिल्ली के सिंहासनका अधिपति बन बैठा, जोकि भारतके इतिहास
में गुलाम घरानेके प्रस्थापकके नामसे प्रसिद्ध है। आजकल पुरान
दिल्लीके नामसे वस्तीका जो भाग प्रसिद्ध है, वहीं इस बादशाहक
राजधानी थी, जिसके कुछ चिन्ह अभी तक वर्त्तमान हैं। वह
कुतुबुद्दीन की एक मसजिद है। उसके प्रवेशद्वार पर जो शिलालेख
है उससे यह मालूम होता है कि, सन् ११९३ ईस्वीमें इस विजयशाल
बादशाहने दिल्लीमें स्वधर्म स्थापन करनेके उद्देशसे यह मसजिद
बनवाई। अस्तु। इसी बादशाहने अपने प्रताप-सूर्य को निरंतर
लोगोंकी दृष्टिके सामने रखनेके लिए अपने नामपर "कुतुबमीनार"
नामका एक प्रचंड विजयस्तम्भ खड़ा किया। यह इमारत इतनी
अपूर्व और भव्य है कि, समस्त पृथ्वीके लोकोत्तर चमत्कारोंमेंसे
एक चमत्कार मानी जाती है। अस्तु।

जिस समय दिल्लीमें गुलामोंका घराना राज्य कर रहा था, उस
समय इसी घरानेमें एक राजनीतिज्ञ स्त्री पैदा हुई, जो कि दिल्लीके

इतिहासमें पहली राज्यकर्त्री स्त्रीके नामसे मशहूर है। इसका नाम रजिया बेगम था। जिस तरह हंगरीके देशभक्तों ने यूरुपकी प्रसिद्ध रानी मेरिया थेरिसा का जयजयकार किया, उसी तरह रजिया बेगमकी प्रजाने भी उसकी जयजयकार करके उसे "सुल्ताना" की बादशाही पदवी प्रदान की। सन् १२९० ईस्वी तक दिल्लीका राज्य गुलाम वंशके अधीन रहा। इसके बाद जलालुद्दीन खिलजी ने अपनी राज्यसत्ता दिल्लीपर प्रस्थापित की। जलालुद्दीनके बाद उसका भतीजा अलाउद्दीन खिलजी दिल्लीके तख्त पर बैठा। इसके शासनकालमें मध्य एशियाके मुगल लोगोंने दो बार दिल्लीपर चढ़ाइयाँ कीं, परन्तु उन्हें हार खाकर वापिस लौट जाना पड़ा।

सन् १३२१ ईस्वीमें पुनः दिल्लीमें राज्य-क्रान्ति हो गई; और वहाँके राज्यसूत्र तुगलक घरानेके हाथमें चले गये। इस घरानेके मूलपुरुष गयासुद्दीन तुगलकने दिल्लीके पूर्वकी ओर, चार मीलके अन्तर पर, एक उच्च स्थान पर तुगलकाबाद नामकी एक स्वतंत्र राजधानी बनवाई। इस तुगलक नगरीके कोट, और उसके उध्वस्त मार्ग अभी तक दृग्गोचर होते हैं। परन्तु आज-कल उस स्थान पर मनुष्योंकी बस्ती बिलकुल नहीं है। सन् १३२५ ईस्वीमें गयासुद्दीनका देहान्त हो गया; और उसके पश्चात् मुहम्मद तुगलक सिंहासन पर बैठा। इसने अपनी राजधानी दिल्लीसे उठाकर देवगिर अथवा दौलताबाद ले जानेका तीन बार प्रयत्न किया। सन् १३४१ ईस्वीमें इब्नबतुटा नामका तुर्किस्तानका एक प्रवासी इस बादशाह के दरबारमें आया था। उसने इस बादशाहकी राजधानी का ठीक ठीक वर्णन किया है। उसमें उसने उस नगरकी निर्जन दशा,

वहाँकी भव्य इमारतों तथा अन्य कलाकौशलके कार्यों का अच्छ चित्र खींचा है। फीरोजशाह तुगलकने फिर एक बार दिल्लीसे अप राजधानी उठाई; और फीरोजाबाद नामका एक शहर बसाया आजकल जहाँ पर हुमायूं बादशाहकी कबर स्थित है, वहीं यह शह था; और वहाँ पर अभी तक उसके राज-प्रासादके शेष चिन्ह दृष्टि गोचर होते हैं। इस राज-प्रासादके दक्षिणी द्वारके समीप चक्रवर्त राजा अशोकका विजयस्तम्भ देख पड़ता है, जो कि सन् ईसवीं तीन सौ वर्ष पहलेका है। इस स्तम्भकी उँचाई ४२ फीट है; औ लोग इसे 'फीरोजशाहकी लाट' कहते हैं। इस पर पाली भाषा मे लिखा हुआ राजा अशोकका शिला-लेख है। फीरोजशाहने इस स्तम्भको यमुना नदीके तीर पर खिजराबाद नामक स्थानसे लाकर यहाँ खड़ा किया। इस विजयस्तम्भसे फीरोजशाहकी राजधानीके स्थलका ठीक ठीक पता चल जाता है।

सन् १३९८ ईस्वीमें, महमूद तुगलकके शासन-कालमें तैमूरलंगने दिल्ली पर आक्रमण किया। उस समय यह महमूद तुगलक गुजरात में भाग गया; और उसकी सेनाने बे-तरह हार खाई। समस्त दिल्ली नगर द्रव्यलोभी तैमूरके भयंकर पंजोंमें फँस गया। उस समय लगातार पन्द्रह दिनों तक दिल्ली में लूटमार और मारकाट होती रही। इसके बाद उस नराधम नर-पिशाचकी तृषा शान्त हुई, और वह असंख्य द्रव्य तथा करोड़ों गुलाम साथ लेकर स्वदेशको लौट गया! तैमूरके दिल्लीसे लौट जानेके बाद दो महीने तक वहाँ राजसत्ता का नाम तक न रहा था। सारा नगर उध्वस्त होकर बे-चिराग हो गया था। महमूद तुगलक पुनः वहाँ आया; और उसने अपनी राजधानी

के गत वैभवको फिरसे स्थापित करनेका थोड़ासा प्रयत्न किया। परन्तु सन् १४१२ ईस्वी में उसकी मृत्यु हो गई; और उसके साथ तुगलक घराने का भी अन्त हो गया। आगे चलकर कुछ समय तक, यानी सन् १४४४ ईस्वी तक, दिल्ली में सैयद घराने ने राज्य किया। इसके बाद लोदी घराने का राज्य आया। उन्होंने दिल्लीसे अपनी राजधानी उठाकर आगरे में प्रस्थापित की और उसीको अपना निवासस्थान बनाया। इस घराने के अन्तिम बादशाह इब्राहीम लोदी पर सन् १५२६ ईस्वीमें तैमूर के छठवें वंशज बाबरने आक्रमण किया। पानीपतके विख्यात रणस्थल पर दोनों में घनघोर संग्राम हुआ। परिणाम यह हुआ कि, बाबर ने इब्राहीमको हटा दिया। उसने दिल्ली को जीत लिया, और वहाँ मुगल बादशाहत की नींव डाली। यह बादशाहत सन् १५२६ ईस्वीसे लेकर अन्त तक कायम थी।

यद्यपि बाबर बादशाहने दिल्लीको जीतकर वहाँ अपना राज्य प्रस्थापित कर दिया था, तथापि उसने वहाँ अपनी राजधानी न बनाई। वह सदा आगरेमें रहा करता था; और वहीं सन् १५३० ई० में उसका देहान्त हुआ। यह बादशाह बड़ा विद्वान् एवं उत्तम कवि था। उसने तुर्की भाषामें स्वयं अपना मनोरंजक "आत्मचरित" लिख रक्खा है। मुगल बादशाहत तो लुप्त होगई; परन्तु बाबर का लिखा हुआ आत्मचरित अभी तक वर्त्तमान है; और उसकी कीर्ति-गाथा गा रहा है। मि० ब्रिवरीज नामके एक अंग्रेज महाशयने इस ग्रन्थके विषय में लिखा है कि, "बाबर का आत्मचरित उन अमूल्य ग्रन्थोंमेंसे है, जिनकी महत्ता सर्वकाल अबाधित रहेगी; और उसकी

योग्यता सेन्ट आगस्टाइन तथा रूसोके आत्मचरितों अथवा गिब्बन और न्यूटनके चरितलेखोंके समान ही है। एशियाखंडमें इस शान समान ग्रन्थ केवल यही एक है।" *

इन शब्दोंसे बाबरके आत्मचरित का महत्व प्रकट हो जाता है इसलिए इस ग्रन्थके सम्बन्धमें रसिक अंग्रेज विद्वानोंका यह कौतुक पूर्ण कथन बिलकुल सच है कि, "बाबर घरानेकी राजसत्ताका नाश होने पर भी, कालकी वक्र-दृष्टिकी तनिक भी परवा न करते हुए, बड़े गर्वसे यह कहते हुए कि 'देखो, मैं ज्यों का त्यों अभी तक स्थिर हूँ,' मानो यह ग्रन्थ कालका ही उपहास कर रहा है!"†

बाबरकी मृत्युके पश्चात् उसका पुत्र हुमायूँ मुगल बादशाहतका अधिपति हुआ। उसने दिल्ली में पुनः राजधानी बनाई और इन्द्रप्रस्थकी प्राचीन भूमि पर एक क़िला निर्माण किया। वह अभी तक 'पुराना क़िला' के नाम से प्रसिद्ध है। सन् १५४० ईस्वीमें अफ़ग़ान मंत्री शेरशाहने हुमायूँ को भगा दिया; और स्वयं दिल्ली

---

* His autobiography is one of those priceless records which are for all time, and is fit to rank with the confessions of St. Augustine and Rousseau, and the memoirs of Gibbon and Newton. In Asia it stands almost alone."

—*Calcutta Review, 1897.*

† The power and pomp of Babar's dynasty are gone; the record of his life—*the Littera Scripta* that mocks at time—remains unaltered and imperishable."

—*S. Lane-poole.*

का बादशाह बन बैठा। उसने दिल्ली के चारों ओर फिर एक भारी शहरपनाह बनवाया। इस प्रचण्ड किलेवन्दीका 'लाल दरवाजा' नामक एक चिन्ह अभी तक शेष रह गया है। शेरशाहकी मृत्युके बाद उसका बेटा सलीम गद्दी पर बैठा। उसने सलीमगढ़ नामक एक किला बनवाकर अपना नाम अजरामर कर लिया है। सन् १५५५ ई० में हुमायूँ बादशाहने फिर दिल्ली पर चढ़ाई करके अपना राज्य वापिस ले लिया। परन्तु छः महीनेके भीतर ही उसकी मृत्यु हो गई। दिल्लीमें उसकी कबर बड़ी प्रसिद्ध है; और वह उत्तम कलाकौशलका दर्शनीय स्थान है। हुमायूँ बादशाह के पश्चात् उसका पुत्र अकबर दिल्लीके सिंहासन पर आरूढ़ हुआ।

अकबर दिल्लीके समस्त बादशाहोंमें उत्तम था। उसकी गणना बहुत अच्छे राजाओंमें की जा सकती है। उसकी उत्तम राज्य-व्यवस्था, न्याय-निपुणता, प्रजाहितदक्षता, आदि बातें प्रसिद्ध ही हैं। परन्तु इन गुणोंके अतिरिक्त, उसमें सब प्रकारके धर्मोंके साथ सहिष्णुता (Toleration) रखनेका गुण अत्यन्त प्रशंसनीय था। उसने सब धर्मके लोगोंके साथ समभावसे बर्ताव किया। इसलिए सब जाति और सब धर्मके लोग उसका धन्यवाद गाते रहे। इस बादशाहको विद्वानोंसे बड़ा प्रेम था। उसके दरबारमें फैज़ी, अबुल-फजल आदि बड़े नामी पंडित थे। अकबरने इन विद्वानोंसे महाभारत, रामायण, इत्यादि पौराणिक ग्रन्थोंका तथा बीजगणित, लीलावती, इत्यादि गणितशास्त्रके ग्रन्थोंका फारसी भाषा में अनुवाद कराया। इसके अतिरिक्त, उसकी सभामें ब्राह्मण, यहूदी, पार्सी और ईसाई आदि धर्मोंके विद्वान् पंडित थे। इन सब

धर्मोंके तत्त्वोंको जानकर उसने यह धर्मसिद्धान्त निश्चित किया था कि—

"There was no god but God, and that Akbar was his Calif."

अर्थात् संसारमें एक परमेश्वरके सिवा दूसरा जगन्नियन्ता नहीं और उस परमेश्वरके धर्मका शासन करनेवाला सिर्फ अकबर है। उसने गोहत्या बन्द कर दी; हिन्दू और मुसलमानोंको एकता के सू में वद्ध किया; और स्वयं जोधपुर तथा जयपुरके राजपूत राजाओंकी कन्याओंसे व्याह करके उनके अन्तःकरणमें अपने प्रति प्रेम-भाव उत्पन्न कर दिया। उसके शासनकालका आदर्शरूप ग्रन्थ "आईन-अकबरी" बहुत प्रसिद्ध है। इस ग्रन्थसे यह अच्छी तरह मालूम हो जाता है कि, अकबरके शासन-कालमें कौन कौनसे सुधार हुए थे। उसके शासन-कालमें दिल्लीके सिंहासनको जो महत्त्व प्राप्त हुआ था वह दूसरे किसी भी बादशाहके शासन-कालमें प्राप्त नहीं हुआ। दिल्लीके बादशाहके लिए पूज्यभाव और आदरका दर्शानेवाला 'दिल्लीश्वर' नामक जो विशेषण प्राप्त हुआ है, उसका आरम्भ इसी सर्वश्रेष्ठ सद्गुणसम्पन्न नृपतिसे हुआ। बर्नियर और परचास नामक यूरोपियन प्रवासियोंने अपने प्रवास-वृत्तान्तोंमें अकबरके विषयमें बहुत प्रशंसापूर्ण लेख लिखे हैं। उनका आशय यह है कि अकबर बादशाह बहुत अच्छे स्वभावका था। उसका राजतेज बड़ा विलक्षण था। उसके शत्रु उसके प्रतापके आगे भयभीत होते थे परन्तु दीनजनोंके लिए उसके अन्तःकरणमें दयाका भारी स्रोत बहता था; और उनके लिए वह एक सुगम आश्रयस्थान था। कला

कौशलकी ओर उसका बड़ा ध्यान रहता था; और वह प्रजा-पालनको ही अपना एक मात्र कर्तव्य समझता था। इस प्रकार विदेशियों तक ने जब उस नृपतिकी इतनी प्रशंसा गायी है, तब यदि वह हमारे संस्कृत कवियोंके वर्णनका भी एक प्यारा विषय बन गया, तो इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं। अकबरके विषयमें संस्कृत कवियोंका इस प्रकार वर्णन पाया जाता है:—

हस्ताम्भोजमाला नखशशिरुचिरश्यामलच्छायवीचिः।
तेजोग्नेर्धूमधारा वितरणकरिणो गण्डदानप्रणाली॥
वैरिश्रीवेणिदण्डो लवणिमसरसी बालशैवालवल्ली।
वेल्लत्यम्भोधरश्रीरकबरधरणीपालपाणौ कृपाणः॥ १॥

वीर त्वं कार्मुकं चेदकबर कलयस्युग्रटंकारघोषं।
दूरे सद्यः कलंका इव धरणिभृतो यान्ति कंकालशेषाः॥
शंकापन्नश्च किं कारणमिति मनसा भ्रांतिपंकायितेन।
स्वक्त्वाहंकारमंकाद्विसृजति गृहिणी किं च लंकाधिनाथः॥२॥

कर्णाटं देहि कर्णाधिकविधिविहितत्याग लाटं ललाट--।
प्रोत्तुंग द्राविडं वा प्रचलभुजबलप्रौढिमागाढराढम्॥
प्रस्फूर्जद्गुर्जरं वा दलितरिपुवधूगर्भवैदर्भकं वा।
गाजीराजीवदृष्टे कुशशतमथवा शाहजल्लालुदीन॥ ३॥

गाजी जल्लालुदीन क्षितिपकुलमणे द्राक्प्रयाणे प्रतीते।
प्रेयस्यः प्रारभन्ते तरलतरगतिर्व्याकुला मंगलानि॥
नेत्राम्भःपूर पूर्णस्तनकलशमुखन्यस्तनालप्रवालाः।
स्त्युट्यन्मुक्ताकलापच्युतकुचकुसुमच्छद्मनाकीर्णलाजाः॥४॥

इस वर्णन से अकबरकी योग्यता व्यक्त होती है।

सन् १६०५ ईस्वी में, अकबरकी मृत्युके बाद, उसका पुत्र 'ज-ज्जेता' जहाँगीर दिल्लीके सिंहासन पर आरूढ़ हुआ। अकबर बा-शाह और जहाँगीर, दिल्लीमें अधिक न रहकर, मुख्यतः आग-अजमेर और लाहोरमें रहा करते थे। इसलिए उनके शासन-का-दिल्लीकी महत्ता वर्णन करने योग्य न बढ़ी। परन्तु सन् १६-ई० के बाद जब जहाँगीरका बेटा शाहजहाँ दिल्लीके तख्त पर बै-तब उसने दिल्लीको अपूर्व शोभा प्राप्त कराई—उसने उसे -अद्वितीय नगर बना दिया। इस बादशाहको भव्य और सुन्दर इ-रतोंका बेहद शौक था। इसलिए उसने दिल्लीमें 'शाहजहानाबा-नामक एक नया शहर बसाया। आजकल जिसे 'नई दिल्ली' क-हैं, वह इस बादशाहके लहरी स्वभावका दर्शक है। दिल्ली-किला; उसके भव्य, रमणीय तथा नेत्रानन्ददायक राज-प्रास-वहाँकी जुम्मा मसजिद और जमना की नहर, इत्यादि अनेक -इसी बादशाहके शासन-समयमें हुए हैं। इन सुन्दर और दर्श-इमारतोंके अतिरिक्त इस बादशाहने आगरेमें अपनी प्राणप्रिय रा-स्मरणार्थ जो अपूर्व इमारत खड़ी की है, उसकी बराबरी संसा-एक भी इमारत न कर सकेगी। आगरेके 'ताजमहल'-सिर्फ नामोच्चार करते ही ऐसा मालूम होने लगता है, मानो -कुशलताकी परमावधि करके संसारकी अखिल सुन्दरता यहाँ भ-गई है। इसी बादशाह ने रत्नजटित मयूरसिंहासन बनवाकर -अपार वैभवसे समस्त राष्ट्रोंके नेत्रोंको चकाचौंधमें डाल दिया -इस बादशाहके पश्चात् औरंगजेब दिल्लीका अधिपति हुआ।

बड़ा धर्म-विक्षिप्त मनुष्य था; और इसे समस्त भारतवर्षमें मुसलमानी धर्मके प्रचार करनेकी महत्त्वाकांक्षा बहुतही सताती रहती थी। इसके धार्मिक अत्याचार और अत्यन्त लोभके कारण सारी प्रजा त्रस्त होगई। इसीके शासन-कालमें हिन्दू-धर्माभिमानी छत्रपति श्रीशिवाजी महाराज महाराष्ट्रमें उदय हुए; और उन्होंने एक स्वतंत्र राज्यकी स्थापना की। औरंगजेबका सारा जीवन मुख्यतः दक्षिणमें मराठों तथा बीजापुर और गोलकुंडाके बादशाहोंसे लड़ने-झगड़नेमें ही व्यतीत हुआ, जिससे वह दिल्लीके वैभवको विशेष रूपमें नहीं बढ़ा सका। औरंगज़ेब बादशाहने छत्रपति शिवाजी महाराजको एकबार दिल्लीमें लाकर कैद किया, जहाँसे उन्होंने बड़ी युक्तिके साथ अपना छुटकारा कर लिया। इस इतिहास-प्रसिद्ध घटनासे मराठोंकी दिल्लीसे विशेष पहचान हो गई। सन् १७०७ ईस्वीमें औरंगजेब हताश होकर मर गया, और उसके पश्चात् मुगल बादशाहतका सूर्य अस्त होने लगा।

औरंगजेबके बाद जो बादशाह दिल्लीके सिंहासन पर अधिष्ठित हुए, उनमें समस्त साम्राज्यको अपने अधीन रखनेका पराक्रम न था, अतएव दिल्लीपतिकी सत्ता विगलित होगई; और "जिसकी लाठी उसकी भैंस" की कहावतके अनुसार सरदार लोग सर्वसत्ताधारी बनकर, राज्यकार्य्य करने लगे। दिल्लीके दरबारमें परस्पर मत्सर, राज्यतृष्णा और अधिकारलालसाका साम्राज्य फैल जानेसे अन्य लोगोंको वहाँ प्रवेश करनेका अवसर मिल गया। मराठोंके मुख्य प्रधान बालाजी विश्वनाथ और उनके पुत्र बाजीराव पेशवाने दिल्ली पर चढ़ाइयाँ कीं, और वहाँके नामधारी बादशाहोंसे मराठोंके लिए

२

"चौथ" तथा "सरदेशमुखी" की सनदें प्राप्त कर लीं। सन् १७
ईस्वीमें दिल्लीकी सम्पत्ति पर जलनेवाला ईरानका बादशाह नादि
शाह दिल्ली पर चढ़ आया। उसने बड़े विजयानन्दसे मु
राजधानीमें प्रवेश किया; और तीन सदियोंके पहले तैमूरलंगने
लूटमार और मार-काट की थी, उसका स्मरण मानों फिरसे जा
करने के लिए नादिरशाहने दिल्लीमें वही दृश्य आरम्भ कर दि
लगभग ५८ दिनों तक दिल्लीमें अमीर और गरीब दोनों बर
लूटे जा रहे थे। अन्तमें जब दिल्लीके लोग बिलकुल निर्धन
त्रस्त होगये, तब नादिरशाहने लूट-मार बन्द की। एक मुसल
इतिहासकारका अनुमान है कि, जिस समय नादिरशाह स्वदेश
लौटा, उस समय वह अपने साथ नौ करोड़ की सम्पत्ति ले
था। दिल्ली की बादशाहतके बिलकुल कमज़ोर हो जानेके कार
उस पर आक्रमण करके उसे हस्तगत करने, और पूर्व-कालके इ
प्रस्थका जीर्णोद्धार करके उस पवित्र स्थान पर हिन्दू-राज्यकी पु
स्थापना करनेके उद्देश्य से मराठोंने शीघ्र ही अपना ध्यान दिल्ली
ओर आकृष्ट किया। परन्तु मराठोंसे हार खाकर अपनी बादशा
गमाना दिल्लीके नामधारी बादशाह तथा उसके सूत्रधारी राजनीति
को इष्ट नहीं था। अतएव उन्होंने अहमदशाह दुर्रानीकी सहा
लेकर पानीपतके रण-स्थलमें मराठोंसे भयंकर लड़ाई छेड़
दुर्भाग्यवश इस लड़ाईमें मराठोंका पूर्ण पराभव होगया; और उ
समस्त रथी और महारथी नष्ट होगये। इन्द्रप्रस्थके राज्यके लि
कौरवों और पाण्डवोंका जिस तरह भारतीय युद्ध हुआ, उ
तरह दिल्लीके तख्तके लिए यह पानीपतका संग्राम है। इस युद्ध

अपरिमित हानि होनेके कारण मराठोंका राष्ट्र कुछ कालके लिए उत्साहशून्य होगया। परन्तु किसी कविकी इस उक्तिके अनुसार, कि "काटा हुआ वृक्ष और भी जोरसे उठता है," वह राष्ट्र फिर उत्साहपूर्वक उन्नतावस्थाको प्राप्त हो गया; और महादजी सेंधिया इत्यादि महाराष्ट्र वीरोंने मुगल और रुहेलोंसे बदला लेकर, दिल्ली के बादशाह शाहआलमको अपने अधीन कर लिया; और सन् १७७१ ई० में इन्द्रप्रस्थपर हिन्दू साम्राज्यका झंडा फिर एक वार फहराकर, अपने हाथसें उस वादशाहको सिंहासन पर बैठाया। सन् १७८९ ईस्वी में गुलाम कादिर और महादजी सेंधियाका युद्ध हुआ, जिसमें महादजीने दिल्लीपतिको खूब छकाया; और उससे पेशवाओंके लिए एक बहुत बड़ा अधिकार और स्वयं अपने लिए आलीजाह बहादुरकी पदवी प्राप्त कर ली। इस समयसे दिल्लीमें मराठोंकी पूर्ण सत्ता जम गई; और दिल्लीकी रक्षाके लिए वहाँ मराठोंकी एक सेना रहने लगी। महादजी सेंधियाके दामाद लाडोजी शितोले देशमुख कुछ काल तक स्वयं दिल्लीके सूबेदार थे। ग्वालियरमें शितोलोंको 'राजराजेन्द्र रुस्तमे जंग-बहादुर' की पदवी अब तक चली आरही है, जो दिल्ली-विषयक मराठोंकी प्रभुता बतलाती है।

निस्सन्देह महादजी सेंधियाके जमानेमें दिल्लीके पदपर मराठोंका पूर्ण अधिकार होगया; परन्तु इसके वाद बहुत जल्द मराठोंकी सत्ता का ह्रास होने लगा; और आगे चलकर शीघ्र ही अंग्रेजोंकी प्रबलता बढ़ गई। उनकी सेनाने दिल्लीमें दौलतराव सेंधियाका पूर्ण पराभव कर दिया; और सन् १८०३ ईस्वीके मार्च महीनेकी चौदहवीं तारीख

बिलकुल शान्त रहती थी। उसकी बुद्धि साधारण थी; परन्तु उसमें शिष्टाचार और आदर-कुशलता विशेष थी।”

यह बादशाह सन् १८३७ ईस्वीमें परलोक सिधारा। उसके बाद उसका बेटा बहादुरशाह सिंहासनारूढ़ हुआ। उसे कवितासे बड़ा प्रेम था; और वह स्वयं कवि था। उसकी कितनी ही कविताएं अभी तक प्रसिद्ध हैं। इसके शासन-समयमें दक्षिणके सरदार रघुनाथराव विंचूरकर दिल्ली गये थे। उनके प्रवास-वृत्तान्तमें दिल्लीसे सम्बन्ध रखनेवाला यह उल्लेख है—

“दिल्ली बहुत बड़ा और विस्तीर्ण शहर है। सारे शहरके चारों ओर भारी कोट है; और यमुना नदीके किनारे बादशाही किला बना हुआ है। वहाँ बहादुरशाह नामका एक बादशाह रहता है। किलेके बाहरी दरवाजे पर यूरोपियन लोग रहते हैं; और उन्हींके हाथमें उस दरवाजे का सारा प्रबन्ध है। किलेमें बादशाही महल हैं। उन सब पर गुम्बज हैं; और उनपर सुवर्णके पत्र जड़े हुए हैं। किलेमें बहुत बढ़िया इमारतें हैं; और बादशाहके दरबार के लिए एक बृहत् स्थान है। वहाँ पर तख्त रखने के चबूतरे पर अब एक पत्थर का सिंहासन है। वहाँके लोग कहते हैं कि पहले इस चबूतरे पर रत्नजटित सिंहासन रहता था। यह स्थान संगमरमर पत्थरसे अत्यन्त ही सुशोभित निर्म्माण किया गया है। वहाँकी दीवारों पर सुनहली बेलबूटे बने हुए हैं। यहाँ पर पहले ठौर ठौर पर रत्न जड़े थे, जिनके चिन्ह अभी तक दिखाई देते हैं। क़िलेमें एक बड़ा बाग है, जिसमें बादशाहके रहनेके महल

तथा उसका जनानखाना है। इन इमारतोंको छोड़कर बाह्
स्थान देखनेकी जिन्हें इच्छा हो, वे वहाँकी आज्ञा लेकर उनको देख
सकते हैं। शहर के रास्ते अच्छे हैं; और उनके दोनों ओर उत्
इमारतें बनी हुई हैं। वहाँ अनेकों जातिके व्यापारी रहते हैं; और
उनका व्यापार भी खूब चलता है। शहरसे जमनाकी नहर
रही है। उसपर कहीं कहीं घाट बँधे हैं; और इधरसे उधर जाने
लिए, थोड़े थोड़े अन्तर पर, पुल बने हैं। इस सारी शोभा
अवलोकन कर मनुष्य चकित हो जाता है। शहरमें अ
प्रकारके तारकशी और नक्काशीकी कई अच्छी अच्छी चीजें मिल
हैं। शहरमें जुम्मा-मसजिद नामका मुख्य स्थान है। इस स्था
पर जानेके लिए हिन्दुओंको मनाही है। मसजिद के बाहर सा
कालको उत्तम प्रकारके कपड़ोंका व्यापार होता है; और अनेक प्र
के पत्ती बिकनेके लिए आते हैं। वहाँ चाँदनी चौक नामक
स्थान है, जहाँ जवाहिरोंका सौदा होता है। शहरमें प्रायः मुस
मान ही अधिक हैं। सिर्फ किलेमें ही बादशाह की हुकूमत
समय चलती है; और बादशाहके द्वारा नियुक्त किये कर्म्मचा
वहाँके झगड़ोंका निबटेरा किया करते हैं।"

इस वर्णनसे जान पड़ता है कि, बहादुरशाहके जमाने
दिल्ली शहरका व्यापार और वैभव पूर्णरूपसे नष्ट नहीं हो पा
था; किन्तु थोड़ाबहुत अवश्य मौजूद था।

कम्पनी-सरकारने दिल्लीपर अपना अधिकार जमाकर वहाँ
बादशाहको अपने अधीन कर लिया था, तथापि बादशाहकी इ
और प्रतिष्ठामें उसने कुछ भी न्यूनता नहीं होने दी थी। सा

हिन्दुस्थानका राज्य-प्रबन्ध दिल्लीके बादशाह बहादुरशाहके मातहत रहकर किया जाता था। इस बादशाहका बड़प्पन कैसा रखा गया था, इसका वर्णन एक ग्रन्थकारने बहुतही अच्छा किया है। वह कहता है:—

"Bahadur Shah is really a king; not merely by consent of the Honourable Company, but actually created such by their peculiar letters patent. Lord Lake found the grandfather of the present sovereign and Emperor, in rags, powerless, eyeless, and wanting the means of sustaining existence. The firmans of the Padshah made the General an Indian noble; the sword of the latter made the descendant of Tamerlane a Company's King, the least dignified, but the most secure of eastern dominations. In public and private, Bahadur Shah receives the signs of homage which are considered to belong to his pre-eminent station. The representative of the Governor-General, when admitted to the honour of an audience addresses him with folded hands in the attitude of supplication. He never receives letters, only petitions and confers an exalted favour on the Government of the British India by accepting a monthly present of 80,000 Rupees. In return he tacitly sanctions all our acts; withdraws his royal approbation from each and all our native enemies, and fires salutes upon every occasion of a victory achie-

ved by our troops. Though he may not have been served with all the zeal inspired by that line of Sadi,—'should the prince of noonday say, it is night, declare that you behold the moon and stars;'—he was suffered, however to believe that he was, the lord of the world, master of the universe, and of the Honourable East India Company, King of India and of the infidels, the superior of the Govenor-General, and proprietor from sea to sea."—*Travels of a Hindoo*—Page 343.

इसका आशय यह है कि, "बहादुरशाह यथार्थमें राजा है, वह कम्पनीकी आज्ञानुसार राज्य नहीं करता; किन्तु कम्पनीकी सनदोंके कारण वह उसके अधीनसा प्रतीत होता है। लार्ड लेकने वर्तमान राजाके पितामह को अशक्त, निर्धन, नेत्र-हीन और निराश्रित पाया था। बादशाहके फरमानके कारण ही जनरल लेक हिन्दुस्थानी उमरावोंमें शामिल किया गया। इधर जनरल लेककी तलवारने तैमूरलंगके वंशज बहादुरशाहको कम्पनीका राजा बनाया। भारतका राज्य प्रतिभा-शून्य, परन्तु सुदृढ़ और सुरक्षित है। सर्वत्र हाट और ख़ासमें बहादुरशाह इज्जतका पात्र है। गवर्नर जनरलका प्रतिनिधि उसके सामने हाथ जोड़कर नम्रतापूर्व्वक खड़ा होता है। उसकी सेवामें जो कागजात पेश किये जाते हैं वे दरख्वास्तके बतौर ही दिये जाते हैं। अँग्रेजी राज्यमें उसको एक महीनेमें अस्सी हज़ार रुपयेका नजराना मिलता है। उसके एवजमें बादशाहकी सदा कृपा-दृष्टि रहती है। कम्पनीके जितने कानून उसके

सामने आते हैं उन्हें वह पास कर देता है। वह सदा कम्पनीका पक्ष लेता है। बादशाह सदा हमारे देशी शत्रुओंसे भी नाराज रहता है। हमारी सेनाकी विजय पर वह आनन्द मनाता है। यद्यपि सादी की यह उक्ति कि—अगर राजकुमार दिनको रात कहे तो तुम्हारा कर्तव्य है कि, तुम भी कह दो, हाँ, हुजूर रात जरूर है; यही नहीं किन्तु चन्द्रमा और तारागण भी दृष्टिगोचर हो रहे हैं—बहादुरशाहके लिए अक्षरशः चरितार्थ नहीं होती, तो भी अंशतः वह उसपर अवश्य घटाई जा सकती है। उसको यह विश्वास दिलाया गया है कि, वह सार्वभौम पृथ्वीपति है; और ईस्ट इंडिया कंपनीका स्वामी तथा समुद्रके एक सिरेसे दूसरे सिरे तकका अधिपति है।"

तात्पर्य यह कि, ईस्ट इण्डिया कम्पनीने पहलेसे ही दिल्लीके बादशाहसे जो बर्त्ताव रखा था, उससे उसके अन्तःकरणमें कोरी बड़ाईका यह व्यर्थ विचार समा गया था कि, मैं सार्वभौम चक्रवर्ती राजा हूँ, और ईस्ट इण्डिया कम्पनी मेरी नौकर है। अतएव उसे यदि यह इच्छा हुई कि, सार्वभौमत्व स्थिर रहे; और मेरी इज्जत इसी तरह सतत बनी रहे, तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं। दिल्लीके प्रजाजनोंकी दृष्टिमें—यही नहीं, किन्तु हिन्दुस्थानके समस्त लोगोंकी दृष्टिमें—दिल्लीपति सर्वश्रेष्ठ, दूसरा परमेश्वर, माना जाता था। इसलिए अवश्यही उनके अन्तःकरणमें उसके प्रति पूज्यभाव और अभिमान होगा। परन्तु आगे चलकर जैसे जैसे कम्पनी सरकारकी प्रबलता अधिक होती गई; और वास्तविक सार्वभौमिकता उसके हाथमें आती गई, वैसे वैसे इस नामधारी कठपुतलेको चक्रवर्त्ती राजा मानकर उसके पादपद्मोंमें लीन होनेका विचार कम्पनी सरकार

के अधिकारियोंको अप्रयोजक मालूम होने लगा। दिल्लीका पहल
रेजीडेन्ट सर चार्ल्स मेटकाफ़ बड़ा राजनीति-कुशल था। वा
बादशाहके आदर-सत्कारमें कुछ भी कमी न पड़ने देता था। परन्तु
लार्ड एमहर्स्ट इत्यादि अभिमानी पुरुष बादशाहको इतना सम्मा
देना पसन्द नहीं करते थे। उन्होंने अपनेको बादशाहकी बराब
का समझकर दरबार में जूते निकालकर जाना, तथा बादशाह
चरणोंके निकट बैठना, आदि बातोंको स्वीकार नहीं किया। प्रत्यु
उन्होंने बादशाहके निकट दरबारी मंच पर बैठनेका अपना स्व
प्रस्थापित किया। आगे चलकर लार्ड बेंटिकने नजरानोंके विषय
काटकसर की। इसके बाद लार्ड एलिनबरोने इसके भी आ
एक कदम और बढ़ाया। उन्होंने स्वयं एक छत्रपति राजाके समा
बादशाहसे भेट की; और बादशाहको वार्षिक नजराना देनेकी
प्रथा थी, उसे बन्द कर दिया। इस कारण बादशाहको विषमत
मालूम हुई; और उसका मन उदास हो गया। लार्ड एलिनबरो
के बाद लार्ड डलहौसी हिन्दुस्थानके गवर्नर-जनरल हुए। उन्हों
बादशाहके व्यर्थ आडम्बरको सदाके लिए तोड़ देनेका प्रयत्न किया।
बादशाहका औरस पुत्र शाहजादा सन् १८२९ ईसवीमें मर गया।
उस समय लार्ड साहबने मृत शाहजादेके पुत्रसे सिंहासन-त्यागका प
पहले ही से लिखा लिया, जिससे बहादुरशाह बादशाहके बाद दिल्ल
के तख्त पर उसे बैठाने का मौकाही न आवे। इन समस्त अप
मानोंके कारण बादशाहको विशेष कष्ट हुआ और इस दुःखदायक
विचारसे उसका अन्तःकरण क्षुब्ध हो गया कि, उसके बाद मुगल
बादशाहत बिलकुल रसातल को चली जायगी। उसी दशामें सन्

१८५७ का साल आया, जिसने बहादुरशाह जैसे हताश और सन्तप्त राजवंशीय लोगोंको बलवा मचानेका अवसर प्राप्त करा दिया। उसका भयङ्कर परिणाम दिल्लीके इतिहासमें लिखा है।

सन् १८५७ ईसवीमें दिल्लीमें जो भयंकर बलवा मचा, उसमें बहादुरशाह शामिल हो गया। इस बलवेसे उसे लाभ तो कुछ न हुआ; परन्तु उसके पुत्र मेजर हडसनकी बन्दूकों द्वारा मारे गये; और स्वयं वह भी अंग्रेजों द्वारा पकड़ लिया गया। अंग्रेजोंने फौजी अदालतके सामने उसकी तहकीकात की; और उसे सदाके लिए काले पानीको भेज दिया। फल यह हुआ कि, दिल्लीमें रहते हुए उसे जो कुछ थोड़ा-बहुत वैभव प्राप्त था, वह भी अब बिलकुल जाता रहा; और रंगूनमें सन् १८६२ ईसवीके अक्टूबर महीनेकी सातवीं तारीख को, अत्यन्त विपदावस्थामें, दिल्लीका यह अन्तिम बादशाह काल-कवलित हुआ! इस प्रकार मुगल बादशाहत का समूल नाश हो गया; और वह कालके विश्व-भक्षक जबड़ेमें समा गई! दिल्लीके सार्वभौमिक पदका भोग करनेवाले अनेकों अच्छे और बुरे राजाओं के केवल नाम तथा उनके सुकर्म और कुकर्म मात्र दिल्लीके इतिहासमें दर्ज हैं, और दिल्ली नगरी आजकल उन राजाओंके भव्य महलों, उनके विशाल मीनारों, उनके अत्युच्च जयस्तम्भों और उनकी भारी मसजिदोंका प्रदर्शन करती हुई दर्शकोंके अन्तःकरणमें आश्चर्य और खेद उत्पन्न करा रही है। मार्क्स आन्टोनियसने क्या ही ठीक कहा है:—

"O ! Mighty Sovereigns ! do ye lie so low ?
Are all they conquests, glories, triumphs, spoils
Shrunk to this little measure ? Fiar thee well !"

अर्थात् हे श्रेष्ठ राजाओ ! आज तुम किस गिरी हुई दशा वर्तमान हो ! क्या तुम्हारे विजय, प्रभुत्व, शान-शौकत और लूटम का यही अन्त है ? तुम्हें अन्तिम नमस्कार है !

राजर्षि भर्तृहरिने भी ऐसी ही उक्ति की है। वे कहते हैं:—

सा रम्या नगरी महान् स नृपतिः सामन्तचक्रं च तत्।
पार्श्वे तस्य च सा विदग्धपरिषत्ताश्चन्द्रबिम्बाननाः ॥
उन्मत्तः स च राजपुत्रनिवहस्ते बन्दिनस्ताः कथाः।
सर्वं यस्य वशादगात् स्मृतिपथं कालाय तस्मै नमः ॥

अर्थात् वह रमणीय नगरी, वह बड़ा राजा, राजाका वह मंडल उसके पार्श्व भागमें रहनेवाली वह विद्वानों की सभा, वे चन्द्रमुख सुन्दर स्त्रियाँ, वह बलशाली राजपुत्रोंका समुदाय, तथा वे स्तुति करनेवाले भाट और वे अनेक प्रकारकी अच्छी बातें आदि स जिसकी सामर्थ्यसे लुप्त होकर स्मृतिशेष मात्र रह गयी हैं, उस का को नमस्कार है !

दूसरा प्रकरण

दिल्लीका किला और मुख्य राजप्रासाद

दीवान-ए-आम और दीवान-ए-खास

जो लोग दिल्ली देखने जाते हैं, उन्हें वहाँके मुख्य मुख्य स्थानोंको देखनेके लिए कमसे कम तीन दिन तो अवश्य ही लग जाते हैं। इन तीन दिनोंमें एक दिन दिल्लीका प्रसिद्ध किला तथा उसके मुख्य राजमहल और उसके निकटवर्ती अन्य इतिहास-प्रसिद्ध स्थानोंको देखने एवं फीरोजाबाद और इन्द्रप्रस्थके दर्शन करनेमें व्यतीत होता है। कोई भी नया मनुष्य जो दिल्ली जाता है, वहाँके राजमहल ही पहले उसके चित्तको मोहित कर लेते हैं। उनकी सुन्दरता, उनकी भव्यता, उनका तेज, उनकी नक्काशी और उनकी रचना कुछ ऐसी मनोरम है कि, उनकी ओर देखकर, शायद ही कोई मनुष्य हो, जिसका अन्तःकरण आनन्द और आश्चर्यसे न फूल उठे। इन राजमहलोंका वर्णन करनेके पहले उनका थोड़ासा इतिहास दे देना आवश्यक है।

दिल्लीका किला तथा उसके राजमहल शाहजहाँ बादशाहने बनवाये हैं। एक ऐतिहासिक ग्रन्थसे मालूम होता है कि, उनके बननेमें बीस साल लगे; और उस समयके हिसाबसे पन्द्रह लाख रुपये खर्च हुए। इस किलेका घेरा एक मील है; और उसमें पहले

दस-बारह राजमहल थे। परन्तु इस समय उनमेंसे सिर्फ मुख्य महल ही कायम हैं, और शेष नष्ट हो गये हैं। इस कि शहरकी ओरसे दो द्वार हैं। उनमेंसे एक द्वार पर जयमल फतहसिंह नामक विजयी राजपूत वीरोंकी, दो मूर्तियाँ थीं, हाथीपर सवार थीं। ये मूर्तियाँ भारतके शिल्पकारोंने बनाई इनके विषयमें यह आख्यायिका प्रसिद्ध है कि,ये दोनों वीर चित्त अकबरसे बड़ी शूरताके साथ लड़े; और अपनी मातृभूमि के धारातीर्थमें पतन हुए। इस लिए अकबरने उनके स्मरणार्थ मूर्तियोंको बनवाया; और उन्हें अपने राज-द्वार पर खड़ा कि कोई कहते हैं कि, जहाँगीर बादशाहने ये मूर्तियाँ बनवाई थीं। किसी भी बादशाहने उन्हें क्यों न बनवाया हो; परन्तु बर्नि नामक यात्रीने प्रत्यक्ष देखा था कि, वे शाहजहाँ के राज-द्वार खड़ी थीं। उसने अपनी भारतीय यात्राके वर्णनमें उन मूर्ति सुन्दरताकी बड़ी प्रशंसा की है; और कहा है कि, हिन्दुस्था मनुष्योंकी पहली मूर्तियाँ यही हैं। उसने अपनी यात्रामें लिख कि, "जयमल और फत्ताकी मूर्तियाँ कलाकौशलकी दृष्टिसे मूल्यवान् हैं। वे लाल रेतीले पत्थरकी बनी थीं; और उ आकार मनुष्यके आकारके बराबर था। जिन बड़े बड़े हाथिय ये मूर्तियाँ रखी थीं, वे काले संगमरमरके बने थे। और हौदे और पीले संगमरमरोंसे अलंकृत किये गए थे*।" अस्तु!

*"The statues of Jaymal and Patta are sim valuable as works of art, as they are, perhaps only portrait statues that have been erected

किलेका दूसरा दरवाजा 'लाहोरदरवाजा' के नामसे प्रसिद्ध है; और वहाँकी खाईका काम अत्यन्त ही दर्शनीय है। स्वयं दरवाजा ही बड़ा मजबूत तथा अभेद्य है, और उसके ऊपरसे अत्यन्त ही रमणीय दृश्य दिखाई देता है। उसके पश्चिममें जुम्मा मसजिद और पूर्वमें शहर तथा मन्दिर देख पड़ते हैं। इस लाहोर-दरवाजेसे चाँदनी चौक तक बिलकुल सीधा रास्ता जाता है। इस दरवाजेसे किलेमें प्रवेश करते ही प्रथम नक्कारखाने अथवा नौबतखाने की इमारत दृष्टिगोचर होती है। इसके बाद 'दीवान-ए-आम' और 'दीवान-ए-खास' नामके दो मुख्य राजमहल देख पड़ते हैं। ये ही दिल्लीपतियोंके लोकोत्तर प्रासाद हैं।

दिल्लीमें जो अनेक प्रेक्षणीय स्थल हैं, उनमें 'दीवान-ए-आम' और 'दीवान-ए-ख़ास' नामके ये दो बादशाही दरबार मुख्य हैं। ये प्रासाद दिल्लीके किलेके भीतर हैं। शाहजहाँ बादशाहने यह किला बनवाया था। यह अत्यन्त भव्य और प्रचंड है। यह आगरेके किलेकी नाईं सुन्दर है; और सारा किला लाल पत्थरका बना है। यह किला जमना नदीके तीर पर स्थित है; और इसका घेरा डेढ़ मील है। इसके आसपास एक बृहत् कोट है, जो लगभग चालीस फीट ऊँचा है। इस किलेके मुख्यद्वारको 'लाहोरगेट'

India for many centuries. They are made of red sand-stone, and are of life-size, while the huge elephants on which they sit are of black marble, and the hinsings are decorated with white and yellow marbles."—*Bernier's Travels.*

कहते थे, परन्तु अब वह उसका नाम नष्ट होकर 'विक्टोरिया
हो गया है। उस द्वारके शिरोभाग पर नील-रक्त-शुभ्र—वर्ण
मिश्रित—एक छोटीसी ध्वजा फहराती रहती है। कहनेकी आव
कता नहीं कि यह ध्वजा हमारी उस दयालु सरकारकी है, जिस
बान है कि हम सब वर्णोंकी प्रजाके साथ समान बर्ताव करते
इस प्रवेश-द्वारके भीतर जाते ही पहले अनेक बड़ी बड़ी मेह
मिलती हैं; और वहाँसे किलेका सारा वैभवशून्य दृश्य दिखाई प
लगता है। सन १८५७ के सिपाहीविद्रोहके समय यहाँकी अ
सुन्दर इमारतोंके ध्वंस हो जानेके कारण सारा किला उजाड़
गया है। तथापि उसकी दीनावस्थाको छिपाकर उसे हराभरा दि
लानेके लिए ही मानो वहाँकी जमीन साफ करके, रास्ते आदि व
स्थित करके, थोड़ेसे वृक्ष लगा दिये हैं; और कई एक स्थानों
छोटे छोटे बगीचे लगा दिये हैं। राजमहल का सिर्फ दर्शनीय भ
ही सुरक्षित रक्खा है; और शेष कई महलोंका नाश कर दिया ग
है। सिर्फ वे ही राजमहल कायम रखे गये हैं जिन्हें स्वाभावि
रीतिसे फौजी अधिकारी काममें ला सकें। उनका मिश्र स्वा
अवलोकन करके दर्शकोंको खेद उत्पन्न हुए विना नहीं रह सकत
जिन राजमहलोंमें संगमरमरके पत्थरों का शुभ्र तेज चमकता
वहाँ सरकारके पब्लिक वर्क्स विभागने अँग्रेजी तरहकी जो मरम्
की है, वह अत्यन्त ही विसंगत मालूम होती है। जिन रा
महलोंके प्रवेश-द्वारोंमें अनेकों द्वारपाल सशस्त्र डँटे रहते थे, उ
सामने आज वृक्षोंके गमलोंके सिवा और कुछ नहीं देख पड़ता
अस्तु। इस प्रकार समस्त किलेका तेजहीन दृश्य देखकर का
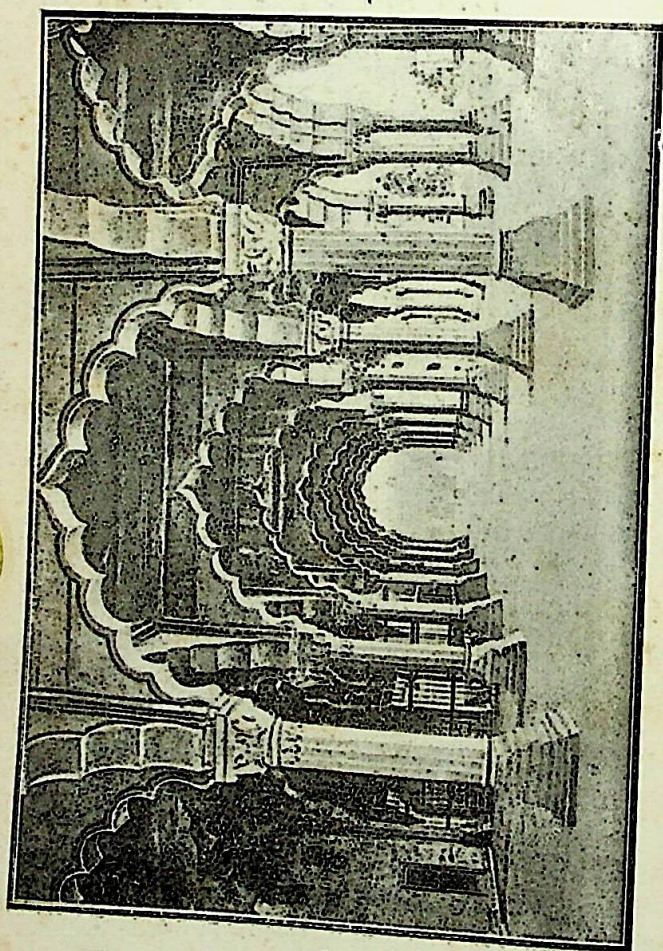
दीवाने-आम ।

चक्रकी कुटिल गतिका बारम्बार स्मरण होने लगता है कि, इतने में हमारे सामने नेत्राकर्षक, लाल रंगकी, खुली हुई, परन्तु अत्यन्त भव्य, इमारत उपस्थित होती है। यही है इतिहास-प्रसिद्ध 'दीवाने आम' नामका दिल्लीपतिका मुख्य दरबार !

यह सुप्रसिद्ध दीवानखाना, सुनहले रंगके बेल-बूटोंसे सुशोभित किया हुआ, पहले अपार वैभवका वासस्थान था। इस दीवान-ए-आमकी सारी छत चाँदीकी बनी थी; और उसपर कलाकौशल का बहुत बढ़िया काम किया हुआ था। यहाँके प्रत्येक स्तम्भपर आसमानी रंगका चमकदार मुलम्मा चढ़ा हुआ था; और उसमें ठौर ठौरपर सुन्दर पुष्प बने हुए थे। इस इमारतकी कुल नक्काशी बहुतही अप्रतिम थी—केवल यही नहीं; किन्तु उसमें कई एक इतिहासप्रसिद्ध घटनाओंके चित्र, अत्यन्त मार्मिक रीतिसे, चित्रित किये हुए थे। जिस समय शाहजहाँ बादशाहने आगरेका ताजमहल बनवाया, उस समय उसने शीराजके प्रसिद्ध कारीगर अमानतखाँ को उसपर अपना नाम लिखने की आज्ञा दी थी। इसलिए उसने ताजमहलमें एक जगह पर "शीराजका नम्र फकीर अमानतखां" ये शब्द चित्रित करके हिजरी सन् १०४८ लिख दिया है। इसी प्रकार, शाहजहाँ बादशाह ने एक यूरोपवासी चित्रकला-विशारद को भी यह आज्ञा दे दी थी कि, इस महत्वकी चित्र-मालामें वह अपनी स्पेन की पोशाकमें एक तसवीर खींच ले। इस मनुष्यका नाम 'आस्टिन डी बोर्डो' था। इस कुशल कलमबहादुरने हिन्दुस्तानके सब प्रकारके सुन्दर पक्षियोंकी प्रतिकृतियाँ इस दीवान-खानेमें चित्रित की थीं। इसके अतिरिक्त, उसमें एक जगह पर एक

अत्यन्त तेजस्वी तलवारका चित्र भी खींचा था। इस चि
इतिहास यह था कि, एक बार चित्तौड़का एक राजपुत्र दर
बैठा था कि बादशाहके किसी प्यारे मुसलमानने उसका थो
अपमान कर दिया। उसी समय उस तेजःपूर्ण राजपूत
अपना खड्ग निकालकर भरे दरबारमें बादशाहके सामने उस
बदला लिया; और जब बादशाहने उससे इसका उत्तर पूँछा,
उसने 'लेडी आफ दी लेक' काव्यके 'रॉडरिक ढू' की नाईं
तेजस्वितापूर्ण उत्तर दिया कि:—

"I right my wrongs where they are given
Though it were in the court of Heaven."

अर्थात् मैं अपनी भूलोंको भी सत्य सिद्ध कर सकता हूँ—
न्यायालय स्वर्गका क्यों न हो!

इस उत्तरको सुनकर दरबारके सारे लोग आश्चर्यमें आग
अस्तु। इस महलकी सौन्दर्य-मर्यादा यहीं पर समाप्त नहीं होग
इस महलके मध्यमें दस फुट ऊँचा, संगमरमर पत्थरका, एक चबू
है, जिसपर एक बहुतही सुन्दर शिखराकार शिरोभाग बना
यह स्फटिकके सदृश शुभ्र है; और उसमें शिल्पकारके कलाकौशल
परमावधि ही होगई है। इस सुन्दर स्थलके मध्यमें दिल्लीपति
तख्त—जगत्प्रसिद्ध मयूरसिंहासन—रखा जाता था। मुसलमा
इतिहासमें इस सिंहासनको 'तख्ते ताऊस' कहा है।

इस तख्तका वर्णन जितना किया जाय, उतना थोड़ा है। दिल
के अनेक बादशाहोंने अनेक सिंहासन निर्माण कराये होंगे; पर
ऐसा अद्वितीय सिंहासन किसीने भी नहीं बनवाया। यह सिंहा

दीर्घवृत्ताकार था; और उसकी लम्बाई छै फुट तथा चौड़ाई ४ फुट की थी। इसका सारा ऊपरी भाग हीरा, माणिक, नीलम, पन्ना, पुखराज, इत्यादि अमूल्य रत्नोंका बना हुआ था; और नीचेका भाग सुवर्ण का बना था, जिसके दर्शनीय भाग पर हीरे जड़े थे। उसमें जो माणिक जड़े थे, सिर्फ उन्हींकी संख्या १०८ थी। इसके सिवा जगह जगह पर नीलमणि और पुखराजका भी उपयोग किया गया था। उस सिंहासन पर एक सुवर्णवृत्त बनाकर उस पर एक मोर बैठाया गया था; और ऐसी योजना की गई थी कि, जिससे उसके रत्नजटित डैने अनायास ही सिंहासनासीन बादशाहके ऊपर उड़ते रहें। मोरके डैनोंकी कारीगरी अत्यन्त अप्रतिम थी। उनपर विविध रंगोंको यथोचित रूपसे दर्शानेके लिए नाना प्रकारके रत्न जड़े थे। बादशाहके शिरोभागका छत्र भी हीरे-मोतियों का था; और उसमें बकुलपुष्पके समान, अत्यन्त तेजस्वी, मोतियोंकी झालर लगी थी। इस मयूरासनके समस्त हीरे गोलकुंडाकी खानके थे; और वे तारकापुंजकी नाईं चमकते थे। इस मयूरासन पर पीछेके द्वारसे आकर बादशाहकी सवारी बड़ी सज-धज के साथ विराजमान होती थी। इस अद्वितीय मयूर-सिंहासनके कारण दरबारको अप्रतिम शोभा प्राप्त हुई थी। टावर्नियर नामके एक फरासीसी यात्री ने इस सिंहासनका मूल्य लगभग डेढ़ करोड़ रुपयेका अनुमान किया है! अस्तु। दिल्लीपति पर कुटिल कालकी वक्रदृष्टि हुई; और सन् १७३९ ईसवीमें ईरानके प्रबल बादशाह नादिरशाहने इस मयूरासनको हस्तगत किया। तथापि यह दीवान-ए-आम दरबार, उसके बाद भी, बहुत दिनों तक मौजूद

था। परन्तु सन् १७६० ईसवीमें पुण्यपत्तनस्थ (पूनेके) पेशवा स
शिवराव भाऊने, पानीपतके युद्धके समय, जोशमें आकर इस
आक्रमण किया; और सूरजमल जाटके सदुपदेशपर तनिक
ध्यान न देकर,—पहले मुगलोंने जो रायगढ़के नूतन संस्थापित हि
साम्राज्यके सिंहासनका भंग किया था, उसका बदला चुका
उद्देशसे—इस भव्य महलकी सारी चाँदीकी सुन्दर छत तोड़ डा
और उसके सिक्के बनाकर सैनिकोंको बाँट दिये। एक स्थान
लिखा है कि, इस छतकी कीमत सत्रह लाख रुपये आई थी।
वैभवालंकृत महलके वर्तमान दीन स्वरूपका अवलोकन करके
किसकी आँखोंसे दुःखाश्रु न टपक पड़ेंगे? आजकल वहाँ
सुवर्णजटित नक्काशी नहीं रही है; और न वहाँ वह मयूरा
ही कहीं देख पड़ता है, जिसे देखकर बड़े बड़े पृथ्वीपति भी दिल्ली
पतिके वैभवकी ईर्षानलमें जल मरते थे! जिस संगमरमरके चबू
पर यह रत्नासन रखा जाता था, वह निस्सन्देह अभी तक सि
है; और अपनी विपदावस्था जतला रहा है! इस पूज्य स्थल
चारों ओर लोहेकी छड़ें लगा दी गई हैं कि जिससे नाना प्रकार
सभी दर्शकोंका उसमें हस्त स्पर्श न हो सके।

अस्तु। इस दुर्दैव-ग्रस्त 'दीवान-ए-आम' का दर्शन करके दर्श
के अन्तःकरणमें वैभव की क्षणभंगुरताके विषयमें अनन्त कल्प
तरंगें उठने लगती हैं; और उनका मन किंचत् अस्वस्थ हो जाता
कि इतनेहीमें उन्हें 'दीवान-ए-खास' नामकी एक दूसरी मनोरम इमा
रत देख पड़ने लगती है। इस इमारतकी स्फटिकतुल्य शुभ्र प्र
दर्शकोंके नेत्रोंको ऐसा आकृष्ट कर लेती है कि, उन्हें अप

दीवाने-खास ।
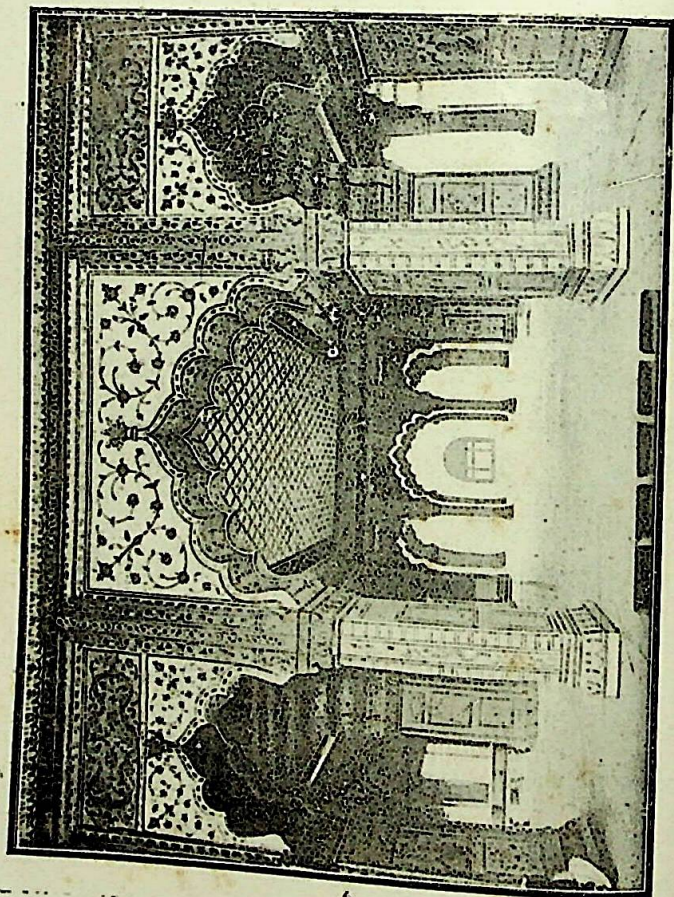
पूर्व-अवस्थाका सहसा विस्मरण हो जाता है । यथार्थमें, इससे यह सहजहीमें मालूम हो जाता है कि, संसार-चक्रमें फँसे हुए मानव प्राणीको मायापाश किस प्रकार बारम्बार बद्ध करता रहता है। अस्तु। इस विख्यात 'दीवान-ए-खास' नामक भवनमें जानेके लिए दर्शकोंको प्रथम एक सुन्दर पुष्पवाटिकामें प्रवेश करना पड़ता है। वहाँ जाकर सामने खड़े होनेपर यह भास होता है कि, हमारे सामने कोई अत्यन्त धवल, तेजःपुंज और अपूर्व वस्तु खड़ी है। इस खास महलका सारा काम अत्यन्त शुद्ध और स्वच्छ एवं अति उत्तम संगमरमरके पत्थरका बना है। उसमें भाँति भाँतिके अनेकों रत्न जड़े हैं, और ठौर ठौर पर सुवर्णकी अद्वितीय नक्काशी होनेके कारण, महलको अप्रतिम शोभा प्राप्त होगई है। इस महलके एक ओर जमना नदीका दृश्य दिखाई देता है। एक ओर बागकी शोभा देख पड़ती है। एक ओर इसका प्रवेश-द्वार चमकता है कि, जिस-पर सुवर्णांकित न्यायतुलाका चित्र खींचा हुआ है। सायंकालके समय इस महलपर जब कभी कोमल, परन्तु आरक्त, सूर्यकिरणोंकी प्रकाश-लहरें परावर्तन पाकर चमकने लगती हैं, उस समय यहाँ जो तेजोमय दृश्य दृग्गोचर होता है, वह सिर्फ देखते ही बनता है! सचमुच सोचने की बात है कि, जिस समय यहाँ सच्चे रत्न विराजते होंगे, उस समय यहाँ कैसी अप्रतिम शोभा देख पड़ती होगी। वास्तवमें उसका वर्णन करना अत्यन्त कठिन है।

इस महलके पूर्वाभिमुख द्वारके शिरोभाग पर फ़ारसी ज़बानमें यह पद्य लिखा हैः—

"अगर फ़िर्दौस बर-रूये जमीनस्त-
हमीनस्तो हमीनस्तो हमीनस्त।"

"If on the earth be an Eden of bliss,
It is this, it is this, none but this!"

अर्थात् यदि पृथ्वी पर कहीं स्वर्ग है, तो वह यहीं है, यहीं यहीं है। यहाँ पर हमें स्वर्गीय पं० श्रीधर पाठककी इस कविता स्मरण होता है:—

"यही स्वर्ग सुरलोक यही सुर-कानन सुन्दर।
यहिँ अमरनको ओक यहीं कहुँ बसत पुरन्दर।"

—काश्मीर-सुखमा।

इस सौंदर्य-मन्दिरमें अनेकों अत्यन्त महत्वपूर्ण घटनाएँ घटि हुई हैं। इससे जान पड़ता है कि, मानों राजकीय परिवर्तनों अवलोकन करनेके लिए ही यह महल निर्माण किया गया है। इस महलमें शाहजहाँ बादशाहने बड़ी सजधजके साथ सिंहासनारूढ़ हो कर दिल्ली का शासन किया था। इसी महलमें ईस्ट इंडिया कंपनी के हेमिल्टन साहबको, बादशाहका स्वास्थ्य ठीक कर देनेके उपलक्ष्य सैंतीस ग्राम पारितोषिकमें दिये गये; और कम्पनीके मालपर का माफ करनेकी आज्ञा दी गई थी। इसी महलमें बैठकर औरंगजेब बादशाहने अपने दोनों भाइयों, दारा और मुरादका शिरच्छेद किया था। इसी महलमें नादिरशाहने दिल्लीपति महमूदशाह तुग़लकको अपने वश किया था। इसी महलमें गुलाम कादिरने शाहआलम बादशाहकी आँखें निकलवाकर उसके बेटेका खून किया था। इसी महलमें महादजी सेंधियाने गुलाम कादिरको कैद करके नेत्रहीन बाद

शाहके सामने पेश किया था; और अपनी बहादुरीके उपलक्षमें दिल्लीपतिसे कई सनदें प्राप्त की थीं! यही नहीं, किन्तु गोरक्षाका सनद भी इसी दीवान-ए-खास महलमें प्राप्त हुई थी। बंगाल, बिहार और उड़ीसाके प्रान्तोंकी सनद, यानी सुप्रसिद्ध 'दीवानी' नामका फ़रमान, इसी महलमें ईस्ट इंडिया कम्पनीको दिया गया था! सच-मुचही इस महलमें न जाने कितनी महत्वपूर्ण और राज्यक्रांतिकी घटनाएँ घटित हुईं! सन् १७७३ ईसवीसे लेकर सन् १८०३ ईसवी तक दिल्लीका बादशाह मराठोंके बिलकुल हाथमें था। यही नहीं, किन्तु उस प्रान्त पर सच्चा अमल भी उन्हींका था। ईस्ट इंडिया कम्पनी को यह बात सहन नहीं हुई। उसने बादशाहको स्वतन्त्र करनेका प्रयत्न किया। उस समय लार्ड लेक साहबको "सुमसन-उद्दौला अश-गार-उलमुल्क खान-दौरान-खान जनरल लेक बहादुर फतेहसिंह" नामका जो ख़िताब प्राप्त हुआ था, वह भी इसी दीवान-ए-खास महल में प्रदान किया गया था। अहा! कैसे खेदकी बात है कि, जिस जगह अनेक बादशाहोंका राज्याभिषेक हो, उसी जगह उनका पद-च्युत होना भी बदा हो! जिस राज-महलमें दिल्ली-पतियोंके वैभवको अत्युच्च स्थान प्राप्त हुआ, क्या वहीं उनके राज-वैभवका अन्त भी हो! प्यारे पाठको, तनिक सोचिए तो सही, कैसी परितापजनक कहानी है! कैसा हृदयविदारक दृश्य है! अंगरेजी सरकारकी स्वाभाविक दयालुता से मिली हुई पेंशनपर गुजारा न होने के कारण मृत्युकी मार्गप्रतीक्षा करनेवाले बेचारे वृद्ध बहादुरशाह-दिल्लीके अन्तिम बादशाह-पर जो सन् ५७ के बलवेमें शामिल होनेका अभियोग लगाया गया; और उसकी जाँचके लिए कर्नल डावेस, मेजर पामर, मेजर रेडमंड, मेजर

सायर्स और कैप्टन रोडनेका जो कमीशन बैठाया गया, सो भी
“ दीवान-ए-खास ” महलमें ! जिस सार्वभौम नृपतिको दूसरे लो
का न्याय करना चाहिए, दूसरे यदि उसीके सिंहासन पर बै
उसीका न्याय करें, तो बतलाइये इससे अधिक दुर्भाग्यकी बात
कौनसी हो सकती है ? हम ऊपर कह चुके हैं कि, इस महलके
ओर मुगल बादशाहोंने न्याय-तुलाका एक चित्र बनाया है,
उसका केवल यही उद्देश्य है कि, यहाँ जो न्याय दिया जायगा
बावन तोला पाव रत्ती बिलकुल ठीक ही होगा । इसी न्यायकी तु
सामने बैठकर हमारी दयालु अँग्रेज सरकारके उपर्युक्त अधिकारि
बादशाहको जो न्याय दिया, वह बिलकुल ठीक होना ही चाहि
बादशाह पर जो अभियोग लगाये गये थे, उनमें एक यह भी था
इसने अपनेको दिल्लीका बादशाह जतलाते हुए डौंड़ी पिटवा
इस, तथा इसी प्रकारके दूसरे अभियोगोंके कारण, नियमानु
उसकी जाँच हुई; और उसको काले पानीकी सजा दी ग
सन् १८५८ ईसवीके मई महीनेकी ग्यारहवीं तारीखको, लन्दनके से
जेम्स हालमें, आइल्सबरीके एक पार्लमेंटके सभासदने, इस बादश
की उस समयकी दशाका, अपनी आंखों देखा वर्णन किया
वह कहता है:—

“I saw that broken down old man, not in
room, but in a miserable hole of his palace, lyi
on a bedstead with nothing to cover him, but
miserable tattered coverlet. As I beheld hi
some remembrance of his former greatness seem

to arise in his mind. He rose with difficulty from his couch, showed me his arms, which were eaten into by disease and by flies, and partly from want of water; and he said in a lamentable voice that he had nothing to eat ! I will not give any opinion as to whether the manner in which we are treating him is worthy of a great nation, but is this a way in which, as Christians, we ought to treat a king ?"

अर्थात् "मैं उस जर्जर और अशक्त वृद्ध बादशाहसे मिला था। वह अपने राजमहलमें नहीं, बल्कि एक रद्दी कोठरीमें, एक बिस्तर पर पड़ा था। उसके पास ओढ़नेके लिए एक फटी-पुरानी गुदड़ीके सिवा और कुछ भी नहीं था। ज्योंही मैंने उसकी ओर देखा, त्यों ही मुझे ऐसा जान पड़ा कि, उसे अपने प्राचीन वैभवका स्मरण हो आया है। वह बड़े प्रयत्नसे अपनी जगहसे उठा; और उसने मुझे अपने हाथ दिखलाये। वे व्याधिसे ग्रस्त हो रहे थे; और मक्खियोंने उन्हें खा डाला था ! इसका एक कारण यह था कि, उसे पानी न मिलता था ! बड़े करुण स्वरसे उसने कहा कि, मुझे खानेके लिए कुछ भी नहीं मिलता ! इस रीतिसे जो हम लोग (अंग्रेज) उसके साथ बर्ताव करते हैं, वह रीति हमारे बड़े राष्ट्रके लिए उचित है अथवा नहीं—इस पर मैं अपनी राय प्रकट नहीं करूँगा। हां, एक ईसाईकी हैसियतसे मैं यह पूछता हूँ कि, क्या किसी भी राजाके साथ ऐसा बर्ताव करना उचित है ?"

अस्तु। इस प्रकार, इस बादशाहकी दीन दशाके विषयमें, बहुत कुछ चर्चा होती रही; और अन्तमें वह रंगून भेज दिया गया !

सचमुच ही इस दीवान-ए-खासकी अन्य महत्त्वपूर्ण विशेष बातें कौनसी बतलाई जाँय ? इस स्थानको देखकर किसके हृदयमें की लहरें न उठने लगेंगी ?

"दीवान-ए-खास" के एक ओर एक सुवर्णांकित न्याय तुलाका चित्र बना है। उसका इतिहास भी बड़ा मनोरंजक शाहजहां बादशाह इस महलमें बैठकर न्याय किया था। उस समय यह दिखलानेके लिए कि, वह न्याय सदैव मानो में तुला हुआ होगा, उसने यह न्यायकी तराजू तैयार की। न्यायतुलाके निकट एक घंटा था। इस घंटेको बजाकर प्रजा बादशाहके यहां अपनी अपनी अर्जियाँ दिया करते थे। हैं कि, शाहजहाँने यह प्रणाली अपने पितासे ग्रहण की। जहाँ बादशाहकी न्याय-प्रणालीसे सम्बन्ध रखनेवाली दो आख्यायिका प्रसिद्ध हैं। उनसे मुग़ल बादशाहोंकी मनोरंजक न्याय-प्रणाली अच्छा पता चलता है। वे आख्यायिकाएँ इस प्रकार हैं:—

अकबर बादशाहके पुत्र जहाँगीरको अपने इन्साफका अभिमान था। गरीब-गुरबे भी बराबर बादशाह तक पहुँच इसलिए उसने अपने महलमें एक घंटा बाँध दिया था उसमें एक रस्सी बाँधकर उस रस्सीका अन्तिम सिरा किले बाहर एक खंभेमें बाँध दिया था। जब किसी मनुष्य खास बादशाहकी सेवामें अपनी अर्जी पेश करनी होती तब वह उस रस्सीको खींच देता, जिससे महलमें घंटा बज जा करता था। ज्योंही घंटा बजता, त्योंही बादशाह घंटा बजानेवाले बुलाता, और उसे उचित न्याय प्रदान करता था। एक बार

बैल, जिसकी पीठपर पानीसे भरा मशक लदा था, इस रस्सी बँधे हुए खंभेके पाससे जा रहा था। न जाने उसके मनमें क्या लहर आई कि, उसने अपनी गर्दन खंभेपर रगड़ दी। फल यह हुआ कि महलमें घंटा बज गया। जांच करनेपर मालूम हुआ कि, घंटेका बजानेवाला एक बैल है। तब दरबारके लोगोंने हाथ जोड़कर बादशाहसे निवेदन किया कि, "खुदावन्द, यह एक गूंगा जानवर है। गर्दन रगड़ दी। कृपा करके छोड़ दीजिएगा।" बादशाहने कहा, "नहीं, इस बैलपर कुछ न कुछ अत्याचार अवश्य हुआ है, इसकी पीठपर पानीसे भरा हुआ जो मशक लदा है उसको तौलना चाहिए। उसको तौलने पर मालूम हुआ कि, मशकमें पांच मन पानी भरा है। इसपर बादशाहने यह आज्ञा दी कि, यह पानी बहुत ज़ियादा है। साढ़े तीन मनसे अधिक पानी मशकमें न भरा जाय। जो कोई भरेगा उसे सज़ा मिलेगी।"

अब दूसरी आख्यायिका सुनिए। जहांगीर बादशाह नूरजहाँ-पर अपने प्राणोंसे भी अधिक प्यार करता था। वह बड़ी बुद्धिमती, शूर-वीर और राजकाजमें भी चतुर थी। शिकार खेलनेका उसे बड़ा शौक था। जब उसे अपने कामोंसे छुट्टी मिलती, तब सुबह और शाम दोनों पहर निशानेबाजीका अभ्यास किया करती थी। दिल्लीका किला जमना नदीके किनारे बना है। उसमें जनान-खाना और उसका महल दोनों जमनाकी ही ओर थे। एक दिन नदी के उस पार चांद लगाकर बेगम साहबा निशाना मार रही थीं। दुर्भाग्यवश उनकी एक गोली चूककर एक धोबीके लग गई; और वह बेचारा अपनी जानसे हाथ धो बैठा। धोबिन

रोती-चिल्लाती किलेके दरवाजेके पास आई; और उसने
खींचकर घंटा बजाया। थोड़ीही देरके बाद पहरेवालोंने
बादशाहके सामने लाकर खड़ा किया। वहाँ पहुँचतेही धो
हाथ जोड़कर निवेदन किया, "महाराज, आपके जनान
एक गोली आई; और वह मेरे पतिके बदनमें घुस गई,
वह मर गया है। कृपा कर इसका न्याय कीजिए।"
करने पर मालूम हुआ कि, स्वयं नूरजहांकी गोलीसे ही धो
प्राण गये हैं। यह जानकर बादशाहका चेहरा फीका पड़
दरबारके सारे लोग एकटक बादशाहके मुँहकी ओर देखने
उनको दिल में यह जानने की बड़ी भारी इच्छा हुई
देखें बादशाह इस धोबिनके साथ क्या न्याय करते
बादशाहने अत्यन्त शान्तिके साथ एक बन्दूक, बारूद,
इत्यादि सामान मँगाया; और बंदूकमें गोली-बारूद आदि
उस बंदूकको धोबिनके हाथमें दे दिया; और कहा, "
मुसलमानी न्यायशास्त्रके अनुसार तुझे खूनके बदले खून
मिलना चाहिए। नूरजहाँने तेरे पतिको मारकर तुझे विधवा
दिया है; इसलिए तू भी उसके पतिको मारकर उसे
बना दे। तेरे हाथ में भरी हुई बन्दूक मौजूद है; और नूरजहाँ
पति स्वयं मैं तेरे सामने उपस्थित हूँ। अतएव बंदूक चला
मेरे प्राण हरण कर ले!"

बादशाहके इस भाषणको सुनते ही दरबार के समस्त
चकित हो गये। धोबिनने हाथ जोड़कर प्रार्थना की कि, "महा
इस न्यायसे मुझे संतोष है; परंतु मैंने खून माफ कर दि

इस पर बादशाहने उस धोबिनको नूरजहाँसे कई गांव इनाममें दिलवाये। वे गाँव अभी तक उस धोबिनके वंशमें बने हैं।

इस घंटेको बजाकर न्याय-याचना करनेकी प्रणाली उस न्यायतुला-वाले मन्दिरमें बराबर जारी थी। वहाँ बैठकर शाहजहाँ बादशाहने समय समय पर जो न्याय किये थे उनकी भी अनेक आख्यायिकाएँ प्रसिद्ध हैं, जिनमेंसे यहां पर एक, नमूनेके तौर पर, दी जाती है।

एक बार एक मनुष्यने बादशाहकी सेवामें यह अर्जी पेश की कि, "मेरे पिताकी दो लाखकी सम्पत्ति मेरी माताके पास है; और वह मुझे दुराचारी समझकर उसका कुछ भी हिस्सा नहीं देती। कृपा कर मुझे कुछ दिलाइए।" बादशाहने उस मनुष्यकी माताको बुलवा भेजा; और उसे अपने पुत्रको पचास हजार रुपये देने तथा सरकारी कोषमें एक हजार रुपये दाखिल करनेकी आज्ञा दी। इस पर उस स्त्रीने निवेदन किया कि, "हुजूर, आपके दर्बारमें न्यायकी तराजू है। इस लिए यहाँ जो न्याय मिलता है उसके ठीक होनेमें तिलमात्र भी सन्देह नहीं हो सकता। आप महाराजाधिराज हैं, आपने मुझे अपने पुत्रको पचास हजार रुपये देने का जो हुक्म दिया है सो ठीक ही है; क्योंकि वह मेरे पति का औरस पुत्र है; परन्तु हुजूर ने सरकारी कोष में एक हजार रुपये जमा करनेकी आज्ञा प्रदान की है, उसके लिए मेरा सिर्फ यही निवेदन है कि, मुझे कृपापूर्वक यह बतला दिया जावे कि, सरकारसे मेरे पतिका कौनसा नाता है!" उस स्त्रीका यह मार्मिक भाषण सुनकर बादशाहने उसके वे हजार रुपये माफ कर दिये।

इस आख्यायिकासे इस न्याय-तुलाका उद्देश्य और व कार्य्यका आदर्श समझमें आ सकता है। अब भी इस न तुलाका सुवर्णांकित चित्र देखनेसे उपर्युक्त आख्यायिका स्मरण हो आता है।

रंगमहल अथवा मोतीमहल

यह महल 'दीवान-ए-खास' के नजदीक है। यहाँ शाही जनानखाना था। दिल्लीपतिकी पटरानियां जहां नि करती थीं, वह स्थान यदि अत्यन्त सुंदर हो, तो इसमें आश्चर्य्य नहीं। इस महलमें वेल-बूटोंकी सुन्दर नक्काशी हुई है। आगरेके ताजमहल की तरह यहाँ भी विविध रं पत्थर संगमरमरके पत्थरमें जड़े हुए हैं। इससे महलको अधि शोभा प्राप्त हो गई है। कहते हैं कि, पहले यहाँका सारा रत्नजटित था। उस समय इस महलकी सुन्दरता अपूर्व हो इसमें सन्देह नहीं। उस समय, समस्त महलमें ठौर ठौर हुए विविध रंगोंके बहुमूल रत्न, अपनी उज्ज्वल प्रभासे, यहाँ मूर्तिमान् सुरुचिर स्त्रीरत्नोंके दिव्य तेजको लज्जित करनेका प्र अवश्य करते थे; परन्तु इस कार्य्यमें वे कभी भी सफल-मनोरथ न हुए; प्रत्युत उन्हींको स्त्रीरत्नोंके अनुपम लावण्यसे हार खा बिलकुल स्तब्ध जौर निश्चल होना पड़ता था! इस तेजो रंगमहलके आसपास अनेकों आल्हाददायक, सहस्र धारावा फुहारे, सुन्दर पुष्पवाटिकाएँ, रमणीय लताकुंज, और शीत मन्द-सुगन्ध वायुके सेवनार्थ विश्रान्ति-स्थान, इत्यादि बड़े रमणीय बने थे, जो इस स्थानकी सुन्दरता बढ़ाते हुए हृदय

अत्यन्त ही आह्लादित करते थे। आजकल तो इनमेंसे कुछ भी वहाँ नहीं रहा है—सिर्फ यह 'रंगमहल' मात्र खड़ा है। रसिक पाठकोंको यहाँ पर यह बतलानेकी आवश्यकता नहीं कि 'मुमताज-महल', 'जिन्नतमहल' इत्यादि इस महलकी सौन्दर्य्य-लतिकाओं के नामशेष हो जानेके कारण आज यह रंगमहल केवल नामधारी 'महल' रह गया है।

हमामखाने अथवा स्नानगृह

दीवान-ए-खास के उत्तरकी ओर शाही हमामखाने अथवा स्नानागार बने हैं। इन्हें 'आकाब' कहते हैं। इन स्नानागारोंके तीन कमरे हैं। हरएक कमरेकी धरती पर संगमरमरकी फ़र्शबन्दी है, जिसके मध्यमें मुख्य स्नानगृह है। इसके आसपासकी नक्काशी अत्यन्त ही सुन्दर है। इस स्नानागारमें पृथ्वीसे पानी की अनेकों नलियां लाई गई हैं; और उनमें उष्णोदक तथा शीतोदककी उत्तम योजना की गई है। स्नानगृह-में चारों ओर से पड़देका प्रबन्ध है। उजेलेके लिए दीवारमें ऊपर काँचकी खिड़कियाँ बनी हैं। ये काँच धुँधले हैं, और उनमेंसे सिर्फ़ प्रकाश आता है; परन्तु भीतरका स्नानविलास बाहरसे किसीको नहीं देख पड़ता। इस रम्य स्थान पर जाते ही दिल्लीपतिके विलासोंकी अस्पष्ट कल्पना नेत्रोंके सामने खड़ी हो जाती है; और उन विलासोंका प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त करनेकी लालसा उत्साही अन्तःकरणमें उत्पन्न होती है। दीवान-ए-आमके मयूरासनका वर्णन सुनकर, अथवा उसके स्थानको देखकर, कभी किसीको भी, अरबी कथाओंके अबू हुसेनकी तरह, एक दिनके लिए भी, बादशाह बननेकी इच्छा उत्पन्न

नहीं होती; अथवा मोतीमहल या रंगमहलको देखकर भी, सौ
लतिकाओंके साथ नाना प्रकारकी क्रीड़ा करनेवाले दिल्लीप
वैभवसे ईर्षा नहीं होती; परन्तु इन सुन्दर और मनोवेधक स्नान
तथा उनकी उत्तम रचना और योजनाको देखकर शायद ही
रंगीला दर्शक ऐसा हो, जिसके मनमें मुगल बादशाहोंके विला
अनुभव प्राप्त करनेकी इच्छा न होती हो। वहाँके स्वच्छ
दुग्ध-धवल संगमरमरका सौन्दर्य और प्रशस्त तथा प्रगम
स्नानागार-रचना शायद ही और कहीं देखनेको मिलेगी। स
अपूर्व अपूर्व ही है!

शाहबाग और शाहबुर्ज

इन राजमहलोंमें शाहबाग और शाहबुर्ज नामक दो
अत्यन्त ही दर्शनीय थे। इनमेंसे शाहबागके नष्ट-भ्रष्ट हो जा
कारण उसका पूर्व-रूप अब नहीं रहा है। परन्तु शाहबुर्ज अभी
मौजूद है। बर्नियर नामके फरासीसी यात्रीने इस बागको स्वयं दे
था। इस बागके नाना प्रकारके संगमरमरके फौवारों और
भाँतिके संगमरमरी जलाशयोंकी अप्रतिम शोभाको देखकर
विदेशी यात्री आश्चर्य्यसे चकित हो गया था। इस बागमें शाह
नामक एक अठपहलू मण्डप था। उससे कालिन्दी नदीके रम
तटका सुन्दर दृश्य दिखाई पड़ता था। इस स्थलपर स्वयं बाद
विराजमान होते थे। इसलिए उसके बाहरी और भीतरी दोनों
सुवर्ण के बने थे। सुन्दर तसवीरों और बड़े बड़े दर्पणों से
सजाया गया था। सन् १७९३ ईस्वीमें फ्रांकलिन साहबने इस स्थ
दर्शन किया था, जिन्होंने इस तरह उसका वर्णन किया है:—

"शाहबाग नामक नृपोद्यानमें एक अठपहलू बँगला है। उसके ऊपरसे जमनाका दृश्य दिखाई देता है। इस मन्दिरका नाम शाहबुर्ज अथवा बादशाह-महल है। इसका भीतरी भाग संगमर-मरका बना हुआ है। सन् १७८४ ईसवीमें राजपुत्र जवानबख्त इसी महलकी खिड़कीसे कूदकर लखनऊको भाग गया था। इस मन्दिर पर मराठोंके आक्रमण हुए थे। अतएव वह बहुत नष्ट हो गया है।"

इसके इकतीस साल बाद हीबर नामके एक यात्रीने इसी स्थलको देखकर इस प्रकार लिखा है:—

"मैंने यहाँका बाग देखा। वह बहुत बड़ा नहीं था। परन्तु किसी समय यह अत्यन्त सुन्दर और रमणीय रहा होगा। यहाँ पर सन्तरेके पुराने वृक्ष दिखाई पड़ते थे। गुलाबके गमले और अन्य पुष्प-लतिकाएँ भी यहाँ कई थीं। स्वच्छ संगमरमरकी नालियाँ बनाकर उनके द्वारा सब ओर पानी ले जाते थे। बागमें एक अष्टकोणाकृति सुन्दर मण्डप अथवा उद्यानगृह था। वह बहुत ऊँचा था; और उसकी खिड़कियोंसे नगर तथा सरिताका उत्कृष्ट दृश्य दृष्टिगोचर होता था। परन्तु जिस समय हम वहाँ गये थे, उस समय वह सब अस्वच्छ और अव्यवस्थित दशामें था। स्नानगृह और फौवारे जलरहित अर्थात् बिलकुल शुष्क हो गये थे। उद्यानमन्दिरकी फर्शबन्दी पर कूड़ा-कचरा जमा हो जानेके कारण वहाँकी नक़ाशी लुप्त हो गई थीं; और आसपासकी दीवारोंमें पक्षियोंने अपने घोंसले बना लिये थे!"

अस्तु। अब तो यह बाग बिलकुल ही नष्ट हो गया है। हां,

सिर्फ यह 'शाहबुर्ज' नामका स्थल बुरी दशामें मौजूद है । इ
स्थान पर स्वय दिल्लीपति वायुसेवनके लिए विराजमान होते
वहाँ पर अब चमगीदड़ोंका निवास देखकर अवश्य ही उस स्था
अपने दुर्भाग्य पर खेद होता होगा !

मोती-मसजिद

यह इमारत स्वयं बादशाहकी ईश्वर-प्रार्थनाके लिए थी । इ
सन् १६३५ ईसवीमें औरंगज़ेब बादशाहने बनवाया था; और इ
बनवाने में १६,००,००० रुपये खर्च हुए थे । यह इमारत है
छोटी; पर अत्यन्त सुन्दर है । मुख्य इमारत तीन मेहराब
बनी है । इन मेहराबों और दीवारों पर जो नक्काशी की हुई
वह बहुत सादी होने पर भी अत्यन्त मनोरम है । इसको दे
बड़े बड़े शिल्प-कला-विशारद आनन्दसे नाचने लगते हैं । इ
कथन है कि, यह मसजिद शिल्प-कलाका एक अद्वितीय रत्न
इस मसजिदका द्वार पाँच धातुओंके मेलसे बना है; और उ
अत्यन्त ही कमनीय नक्काशी की हुई है । सन् ५७ के सिपा
विद्रोहके समय इस मसजिद पर गोलोंकी वर्षा हुई थी, जि
इसे बहुत बड़ा धक्का पहुँचा है । बहुत दिनों तक किसीने इ
ओर ध्यान नहीं दिया था, इसलिए इसकी दीवारों पर पीप
कोमल पत्ते दिखाई देने लगे थे । परन्तु अब उसका रूप
गया है; और वह फिर पहले जैसी नई दिखने लगी है । इस
जिदको बनवानेके बाद स्वयं औरंगज़ेब बादशाहने ही इ
प्राणप्रतिष्ठा की; और उसमें निमाज पढ़ना आरम्भ किया ।
वह इस राजप्रासादमें रहता था, तब ख़ास तौर पर, शुभ

पहिनकर, वह इस मसजिदमें ईश्वर-प्रार्थना किया करता था। इससे जान पड़ता है कि, दारा नामक उसके भाईने जो उसे "निमाजी" नाम दिया था, सो बिलकुल उचित था। अब इस मसजिदकी अच्छी मरम्मत हो गई है।

ऊपर जिन स्थानोंका वर्णन किया गया, वही दिल्लीके किलेमें मुख्य स्थान हैं। इनके अतिरिक्त वहाँ और भी कई राजमहल थे; परन्तु वे सब आजकल नष्ट-भ्रष्ट हो गये हैं; और उनकी जगह पर अँग्रेजी पल्टनोंके निवास-स्थान बन गये हैं! दिल्लीके किलेका प्राचीन और भव्य स्वरूप, जितना उसके बाहर के लालरंगके कोटसे और बड़ी खाईसे, व्यक्त होता है उतना उसके अन्तःस्वरूपसे नहीं व्यक्त होता; क्योंकि जबसे वहाँ अँग्रेजी राज्यकी स्थापना हुई है तबसे उसमें अनेकों नई इमारतें बन गई हैं; और पुरानी गिरा दी गई हैं। इतना होने पर भी हमने जिन मुग़ल इमारतोंका ऊपर वर्णन किया है, वे अभी तक मुगलोंके वैभवकी गवाही दे रही हैं। अवश्य ही वे दर्शकोंके अन्तःकरणको प्रसन्न किये बिना नहीं रहतीं।

सलीमगढ़

शाहजहाँ बादशाहके महल और जमना नदीके पुलके बीचमें सलीमगढ़ नामका एक अत्यन्त प्राचीन किला है। शेरशाहके पुत्र सलीमने इस किलेको बनवाया था। इसलिए इसे सलीमगढ़ नाम प्राप्त हो गया है। जब हुमायूँ बादशाह पुनः दिल्लीको वापिस आया, तब उसे अपने शत्रुके पुत्रका नाम कायम रखना उचित न मालूम हुआ। इसलिए उसने, उस नामको बदलकर, उसका नाम

'नाहरगढ़' रक्खा। यह किला मिट्टीका बना है; और अत्यन्त
बेडौल है। तोभी इसका बाहरी दृश्य अत्यन्त भव्य है।
किला जमना नदीके प्रवाहमें बना है। इसलिए वह एक
समान दिखाई देता है। इस किलेसे नदीको सरलतापूर्वक
करनेके लिए जहाँगीर बादशाहने पाँच मेहराबोंका एक पुल बन
था। वह अभी तक मौजूद है। सलीमगढ़का किला
विशेष दर्शनीय स्थान नहीं है, तथापि उसका इतिहास
महत्त्वपूर्ण है। लन्दनमें जिस तरह 'टॉवर आफ लन्डन' ना
एक विख्यात किला है, उसी तरह इसे यदि 'टॉवर आफ देहली'
तो कुछ हर्ज नहीं। 'टॉवर आफ लन्डन' नामक किलेमें जिस
अनेक राजा और राजनीतिज्ञ लोग कैद थे, उसी तरह देहलीके
टॉवरमें भी दिल्लीके राजघरानेके बहुतसे राजपुरुष और दि
दरबारके अनेक सरदार कैदमें रक्खे गये थे। शाहजादा मुराद
कि शराबके नशेमें चूर था, एक हाथीपर बिठाकर इसी कि
लाकर कैद किया गया था। दाराके छोटे लड़के शेखूको, औरंग
की बेटीसे विवाह करके, इसी किलेमें कैद किया था। औरंगजे
ज्येष्ठ पुत्र मुहम्मद सुल्तानको भी पन्द्रह वर्ष तक इसी दुर्गमें
धीनताका दुख सहन करना पड़ा था। इनके सिवा, अन्य कि
चतुर और महत्त्वाकांक्षी राजनीतिज्ञ यहाँ आये होंगे, तथा
पच-पचकर मरे होंगे, इसका कुछ पता नहीं। इँग्लैंडके 'टॉ
आफ लन्डन' नामक क़िलेके कृष्णकृत्योंका वर्णन पढ़कर जिस
पाठकों के शरीर पर रोमांच खड़े हो जाते हैं, उसी तरह सलीमग
क़िलेका वर्णन पढ़कर भी पाठकों को दुःख हुए बिना नहीं रह

राज्य-लोभ अथवा अधिकारलोभकी प्रबलताके कारण जो अत्याचार हुए हैं, उनका प्रदर्शन करनेके लिए ही मानो 'सलीमगढ़' अथवा 'टॉवर आफ लन्डन' अथवा 'वैस्टिली' जैसे उग्र एवं भयानक क़िले अभी तक विद्यमान हैं। अहा! जिस भीमरूपी सलीमगढ़ की किसी समय वह धाक थी, आज वही बिलकुल दीनावस्थामें दिखाई दे रहा है!

तीसरा प्रकरण

दिल्लीकी जुम्मा-मसजिद

दिल्लीके राजप्रासादका देखनेके बाद नगरमें प्रवेश कर
पहले-पहल यह भारी मसजिद दिखाई पड़ती है। हि
स्तान की बढ़िया इमारतोंमेंसे यह भी एक है। ईसाइयोंके लिए
तरह सेंटपीटर्सका गिरजाघर है, अथवा हिन्दुओंमें जैसे जगन्नाथ
का मन्दिर है, वैसीही मुसलमानोंकी यह जुम्मा-मसजिद
आगरेका 'ताजमहल' सबसे श्रेष्ठ है। उसके बाद यदि इस मस
की गणना की जाय, तो कुछ अनुचित नहीं। यह सारी इ
लाल रंगके पत्थरसे बनी है; और बीच-बीचमें उसपर संगमरम
कारीगरी की गई है, अतएव ऐसी भली मालूम होती है, मानों
रंग के दुशाले पर सुन्दर बेल-बूटे कढ़े हों। यह सारी इमारत
बढ़िया संगमरमरकी बनी होती, तो आगरेके 'ताज' के स
यह भी अपनी धवल प्रभासे लोगोंको उसी प्रकार मोहित कर स
थी। अस्तु। यह सारी इमारत यद्यपि संगमरमरकी नहीं बनी
तो भी इससे यह न समझना चाहिए कि, इसकी बनावट सौन्द
कुछ न्यून है। यही नहीं, किन्तु समस्त दिल्ली नगरमें सबसे ऊं
इमारत केवल यही एक है; और यह कहना भी अत्युक्ति न होगा कि
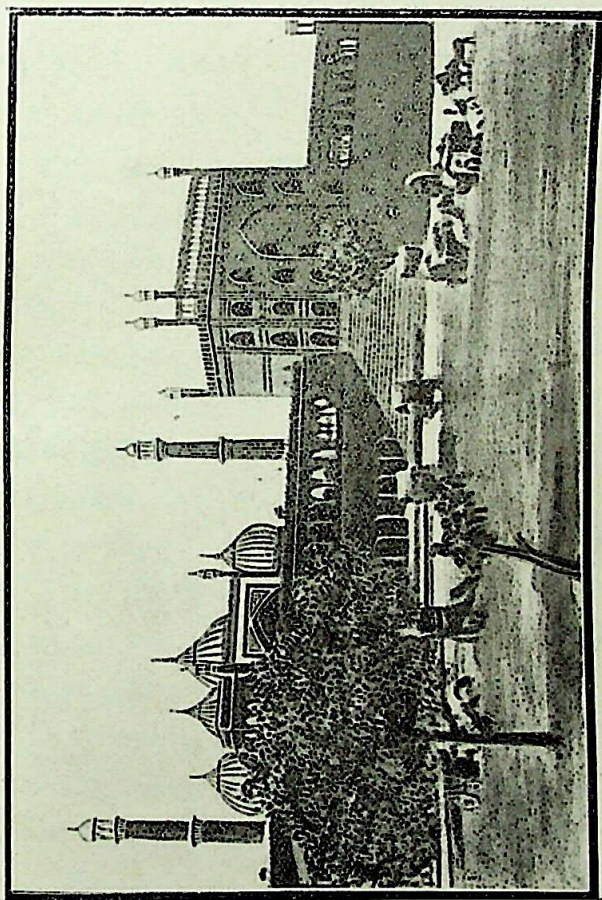
जुम्मा-मसज़िद ।

यह इमारत अपनी भव्यता और अपनी आरक्त प्रभासे अन्य सब इमारतों को लज्जित कर रही है।

यह मसजिद एक ऊँची चट्टान पर बनी है; और इसके लिए वह चट्टान तोड़कर साफ की गयी है। इस मसजिद्के चारों ओर चार मार्ग हैं। परन्तु इसमें प्रवेश करनेके लिए सिर्फ उत्तर, दक्षिण और पूर्वकी ओरसे द्वार खुले हुए हैं। पश्चिमकी ओर बिलकुल द्वार नहीं है। वहाँ सिर्फ पत्थरकी एक ऊँची दीवार ही बना दी गई है। मुख्य तीन ही दरवाजे हैं। उनके आगे, नदीके घाटकी सीढ़ियों की तरह, सीधी-खुली सीढ़ियाँ हैं। मुख्य प्रवेश-द्वार पीतलके ढले हुए हैं; और बहुत भारी तथा मजबूत हैं। इनमें पूर्वीय द्वार बहुत बड़ा और अत्यन्त सुन्दर है। इसे हम महाद्वार कह सकते हैं। इस द्वारसे भीतर जाने पर एक बड़ा भारी आँगन मिलता है। आँगनका विस्तार १४०० घन-गज है। इसमें एक प्रकारके लाल पत्थरकी फर्शबन्दी की हुई है। इस आँगनके बीचोंबीच सुन्दर संगमरमरका एक बड़ा हौज है। उसमें चट्टानके प्राकृतिक झरनेका पानी लाया गया है। इस चौरस आँगनमें ५००० मुसलमान प्रार्थना के लिए एकत्रित हो सकते हैं। इस इमारत की मुख्य मसजिद इस मुख्य आँगनके पश्चिममें है। मक्का चूंकि पश्चिममें है, इसलिए, उसकी दिशाका बोध होनेके लिए, ऐसी रचना की गई है। यह मुख्य मसजिद आयताकार है, जिसकी लम्बाई २०१ फीट और चौड़ाई १२० फीट है। उसके शिरोभाग पर सुन्दर संगमरमरकी तीन मेहराबें हैं, जिनपर सोनेका मुलम्मा चढ़ाकर बहुतही बढ़िया नक्काशी की गई है। इसके दोनों ओर दो मीनारें हैं। वे १२०

फीट ऊँची हैं; और उनपर छोटे छोटे अत्यन्त कमनीय गुम्बज हैं। मसजिदके अग्रभागमें दस दालानें हैं; और उनपर ऊँची अर्धवृत्ताकार मेहराबें हैं, जो अत्यन्त सुंदर हैं।

इस इमारतके शीर्षभागपर, बढ़िया संगमरमरपर, काले पत्थरसे, नस्की भाषाके अक्षर बने हैं। उनमें इस मसजिदके बनने काल और खर्च लिखा है। उससे यह मालूम होता है कि, इमारतके बनानेका काम सन् १६४४ ईसवीसे आरम्भ हो सन् १६५० ईसवीमें समाप्त हुआ है। इस इमारतके लिए लगा छै वर्ष तक ५००० लोग काम करते रहे। उस समयके हिसाब इस इमारतके बनानेमें दस लाख रुपया खर्च हुआ था।

इस मसजिदकी सारी फर्शबन्दी संगमरमरकी है। उस क्रमशः तीन फुट लम्बी और डेढ़ फुट चौड़ी क्यारियां कटी हुई कुल क्यारियां ९०० हैं। इनमें निमाज पढ़ते समय बादशाह अमीर-उमराव लोग बैठा करते थे। किबलेके निकट, यानी मध्यभा के अर्धगोलाकृत शिरोभाग के नीचे, जो नक्काशी की गई है, सर्वोत्कृष्ट है। इसके सामने धर्माध्यक्षका मुख्य पीठ है, जो अखण्ड संगमरमरके पत्थरका बना है। यहाँ की एक दीवाल शाहजहाँ और बहादुरशाहके हस्ताक्षर दिखलाये हैं।

इस मसजिद के एक दालानमें एक कोठरी है। वहाँ जाली काम अत्यन्त दर्शनीय है। इस कोठरीमें मुसलमान लोगोंकी दृष्टि अत्यन्त प्रिय, तथा मुहम्मद साहबके समयकी पुरानी वस्तुएँ रखी हैं उनमें सातवीं शताब्दीकी प्राचीन कुरानकी एक हस्तलिखित प्रति है इसके सिवाय, इमामहुसेन तथा इमाम-हसनके द्वारा लिखी हु

कुरानकी भी दो प्रतियाँ हैं। यहाँ पर 'कप्प-ए-मुबारक' यानी हजरत मुहम्मदकी चर्मपादुकाएँ भी सुगंधित द्रव्योंमें डालकर रखी गई हैं। 'कदम-उल्-मुबारक' यानी उनके पैरकी छाप, और 'मुइ-ए-मुबारक' यानी उनकी दाढ़ीके बाल, भी वहाँ पर रखे हुए हैं। इसी तरह वहाँ पर उनकी कबरके आच्छादनका थोड़ासा शेष भाग भी सुरक्षित रूपसे रखा गया है। जिन महाशयोंको ये चीजें देखनेकी लालसा हो, वे वहाँके काजीको कुछ दक्षिणा देकर उनको अवश्य देख सकते हैं। कहते हैं कि, शाहजहाँ बादशाहने इन वस्तुओंको लाकर यहाँ बड़ी भक्तिके साथ रखा है।

मुग़ल बादशाहोंके जमानेमें जुम्मा मसजिदकी बड़ी इज्जत थी। ईदके दिन यहाँ पर बादशाह और उसके अमीर-उमरा बड़े ठाट-बाट के साथ आया करते थे। उस समय यहाँका दृश्य बहुत ही विचित्र देख पड़ता था। प्रति शुक्रवारको यहाँ पर ईश्वरकी प्रार्थना हुआ करती थी। मुसलमान लोग चूंकि धर्मके लिए पागल होते हैं, इसलिए मसजिदमें एकत्रित होने पर, यह मसजिद उनमें चाहे जैसी उत्तेजना उत्पन्न कर देनेका सामर्थ्य रखती थी। सन् ५७ के बलवेके समय, सितम्बर महीनेके एक शुक्रवार को, यहाँ 'खुतबा' पढ़ा गया; और दिल्लीके सब मुसलमानोंने उस समय यह घोषणा कर दी कि, 'खल्क खुदाका, मुल्क बादशाहका, अमल बहादुरशाहका'। मतलब यह कि, उस भयंकर प्रसंग में यह मसजिद स्वधर्माभिमान तथा स्वदेशाभिमानकी प्रेरणा करनेवाली एक मुख्य जगह बन गई थी। परन्तु वह प्रेरणा क्षणभंगुर हुई; और राज-द्रोही बलवाइयों का शीघ्र ही अन्त हो गया। बलवेके बाद यह चर्चा छिड़ी कि, यह मस-

जिद बिलकुल गिरा दी जावे। परन्तु सरकारने मुग़ल रियास
इस बड़ी इमारतको नष्ट करके संसारमें अपनी अपकीर्ति नहीं का
यह बहुत अच्छा हुआ। बिशप हीबर नामक यात्रीने जु
मसजिदकी अलौकिक रचना देखकर बहुत ही आनन्द प्रकट कि
है—उसने कहा है कि, "इस मसजिदका आकार, उसकी दृ
और उसकी बनावटकी उत्तमताको देखकर मेरे मन पर जैसा प्र
हुआ, वैसा हिन्दुस्तानकी दूसरी इमारतोंके देखनेसे नहीं हुआ
रसेल नामके एक दूसरे यूरोपीय महाशयने लिखा है कि, "इस इ
रतकी विशुद्ध शोभा, उसकी रचनाका परिमाण-सौन्दर्य्य,
भवनसम्बन्धी ऊँची कल्पनाशक्तिकी, यदि हमारे ईसाई-प्रार्थ
मन्दिरके क्षुद्र और दरिद्री भवनसे तुलना की जाय, तो दुखसे
अपना सिर नीचा करना पड़ेगा†।"सारांश यह कि, जिस इमार
रचना-चातुर्य पर विदेशियोंको भी इतना आश्चर्य होता है,
इमारत, सिर्फ दिल्ली शहर के लिए ही नहीं, किन्तु यदि सम
भारतवर्ष के लिए भी भूषण हो, तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं।

* "The size, the solidity, and rich materials the Jumma-Musjeed impressed me more than any thing of the sort which I have seen in India."

—*Bishop Heber*

† There is a chaste richness, and elegance of proportion, and a grandeur of design in all its parts, which are painful contrast to the *mesquine* and paltry architecture of our christian churches.

—*Russell*
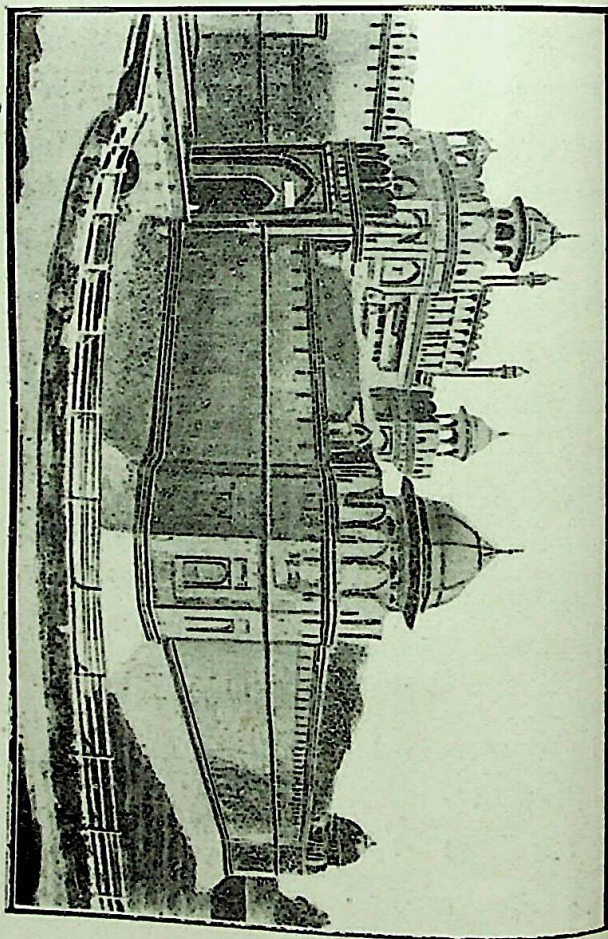
लाहौर-दरवाज़ा ।

दिल्ली शहर

दिल्लीका किला, जुम्मा मसजिद और वर्तमान दिल्ली शहर—ये तीन हिस्से मिलकर नई दिल्ली अथवा शाहजहानाबाद शहर बनता है। इस शहरके चारों ओर एक बड़ा शहरपनाह है; जिसका घेरा साढ़े पाँच मील है; और उसके किलेका कोट डेढ़ मील है। किलेमें दो दरवाजे हैं। उनका नाम क्रमशः 'लाहोर-गेट' और 'दिल्ली-गेट' है। कुल शहरमें दस दरवाजे हैं। उनके नाम इस प्रकार हैः—

१. 'कलकत्ता-गेट'—यह राजमहलके पास है। यहाँसे रेलवे स्टेशन की ओर रास्ता जाता है।

२. 'काश्मीर-गेट'—यह उत्तर में है। चर्च और कचहरियाँ इसके नजदीक हैं।

३. 'मोरी-गेट'—यह भी उत्तरमें है।

४. 'काबुल-गेट'—यह पश्चिममें है। इसके आगे सदर बाजार लगता है।

५. 'लाहोर-गेट'—यह पश्चिममें है; और यहाँसे चाँदनी-चौकको रास्ता जाता है।

६. 'फराशखाना-गेट'—यह नैऋत्यमें है।

७. 'अजमेर-गेट'—यह भी नैऋत्यमें ही है।

८. 'तुर्कमान-गेट'—यह दक्षिणमें है।

९. 'देहली-गेट'—यह भी दक्षिणमें है।

१०. 'राजघाट-गेट—यह पूर्वमें है। यहाँ से जमुनाजीके की ओर रास्ता जाता है।

किलेसे चलकर दिल्ली शहरमें प्रवेश करनेके लिए लाहोर-दर से आना पड़ता है। लाहोर-दरवाजेके भीतर आतेही एक चौड़ा रास्ता मिलता है। यह रास्ता सीधा चाँदनी चौक की जाता है। दिल्ली शहर का नामी चौक यही है। यहाँ धन व्यापारियों और जौहरियों की दूकाने हैं। यहाँका बादशाही ज का वैभव अब नष्ट हो गया है; और फिरसे उसके प्राप्त की बहुत कम सम्भावना है। इस चौककी दूकानें बाहरसे बड़ी कीली दिखाई देती हैं। परन्तु इस रास्ते पर पहले जैसे मूल्यवान् परिधान किये हुए अमीर-उमराव, उनके कीमती सामान और चाँदी से अलंकृत अच्छे अच्छे घोड़े, उनके नाना प्रकारसे शृंगा हाथी, तथा विविध रङ्गके मियानोंके झुंड दिखाई देते थे, अब कहीं पता नहीं है—उनकी जगह पर अब यहाँ अर्वाचीन तांगे और घोड़े-गाड़ियाँ बहुत हैं। रास्तेसे गुजरते हुए चारों नेचेदार हुक्कोंकी धूम खूब दिखाई देती है। हर एक दूकानमें हु अवश्य होता है। पहले के मुसलमानोंको ऐशो-आरामकी जो थी, उसका कुछ स्वरूप अब भी दिखाई देता है। वे लोग व्यसनासक्त रहकर विलासितामें मग्न रहते थे। हाँ, अब अँगरे राज्यमें विद्याका प्रचार बहुत कुछ हो रहा है, अतएव इन लो का ऐशो-आराम भी अब बहुत कुछ कम हो गया है; और ये लो भी अब उन्नतिके मार्गपर अग्रसर हो रहे हैं। यहाँके सुशि लोग बड़े सभ्य हैं, और बाहरवालोंको वे बड़े आदरकी दृ

देख बर्ता यहाँ चाँद इमा की गई साव व्यय

फुट नाम रुपये को के शीर्ष समा "भ टन इसि पका लाय

देखते हैं। तथापि, मुसलमानोंकी रीतिके अनुसार, औपचारिक बर्ताव और कोरा आदर-सत्कार यहाँ पर बहुत है। इसके सिवाय यहाँ पर व्यर्थ की बड़ाई मारनेवालोंकी भी कमी नहीं है। दिल्लीके चाँदनी चौकमें खड़े होनेपर 'दिल्ली-इन्स्टीट्यूट' नामकी एक बड़ी इमारत दिखाई देती है। इस इमारत की बनावट यूरोपियन ढंग की है; और इससे दिल्लीको एक नये प्रकार की शोभा प्राप्त हो गई है। यहाँ वाचनालय, अजायबघर, म्यूनिसिपालिटी, इत्यादि सार्वजनिक संस्थाएं हैं। ग्रामसंस्थाने इस इमारतको १,३५,४५७ रु० व्यय करके निर्म्माण किया है।

"दिल्ली-इन्स्टीट्यूट" के सामने, चाँदनी चौकके एक ओर, १२८ फुट ऊँचा एक सुंदर और दर्शनीय मीनार है। इस मीनारका नाम 'क्लाक टावर' है; और दिल्लीकी म्यूनीसिपालटीने २५,५०० रुपये खर्च करके उसको बनवाया है। इस मीनारसे चाँदनी-चौक को यद्यपि बहुत कुछ शोभा प्राप्त हुई है, तथापि मुग़ल बादशाहों के प्राचीन मीनारोंकी बराबरी यह नहीं कर सकता। इस मीनारके शीर्षभागपर चारों ओर बड़ी बड़ी घड़ियाँ हैं। वे प्रत्येक पलमें, समर्थ रामदास स्वामीके शब्दोंमें, मानो दर्शकोंसे कह रही हैं कि, "भाइयो, घटिकाएं निकल गईं, पल निकल गये; और घंटा टन-टन बजता है। इसी तरह तुम्हारे जीवनका भी नाश हो रहा है। इसलिए इस संसारमें आकर परमात्माका नाम लो; और कुछ परोपकारका कार्य कर जाओ!"

चाँदनी-चौकमें प्राचीन ऐतिहासिक स्थानोंमेंसे दो स्थान देखने लायक हैं—एक रोशनुद्दौला की मसजिद; और दूसरा कोतवाली।

रोशनुद्दौला की मसजिद सन् १७२१ ईस्वीमें, मुहम्मदशाह बा- शाहके जमानेमें, रोशनुद्दौला जफरखांने बनवाई थी। यह मस- जिद है तो छोटी ही; परन्तु अत्यन्त कमनीय है। इसके गुम्बजपर सोनेके मुलम्मेका काम किया गया है; इसलिए इस मसजिदको सोने की मसजिद भी कहते हैं। नादिरशाहने जिस समय दिल्लीपर आक्रमण करके वहाँके लोगोंको कतल करवाया, उस समय उसने इसी मसजिदकी छतपर खड़े होकर वहाँकी कतलका अवलोकन किया था! दीन प्रजाजनोंका करुणा-पूर्ण क्रन्दन सुनकर उसके हृदयमें रत्तीभर भी दया उत्पन्न न हुई! प्रत्युत, उनके रुधिर प्रवाहके साथही साथ उस नराधम नरपिशाचके हृदयमें आनन्द तरङ्गें उमड़ने लगीं थीं!! ऐसे पुरुषोंके लिए 'मानवसृष्टिके राक्षस' से अधिक और क्या उपमा दी जा सकती है? इस स्थानके पासही कोतवाली की इमारत है। हडसन साहबने, सन् १८५७ ईस्वीके बलवेके समय, बादशाहके पुत्रोंको मारकर, उनकी लाशें लोगोंको दिखलानेके लिए यहीं पर लाकर रक्खी थीं! बलवेके समय यद्यपि यह स्थान रक्तकी बूँदोंसे कलङ्कित हो गया था, तथापि आजकल वहाँ शान्ति-देवीका पूर्ण साम्राज्य है।

दिल्लीके चाँदनी-चौकका अवलोकन करनेवालोंके मनमें वहाँके 'विक्टोरिया-बाग' को देखनेकी इच्छा उत्पन्न होती है। यह बाग अँग्रेजी ढँगपर लगाया गया है; और नगर-निवासियोंके विश्रामके लिए वहां पूरा पूरा सुभीता किया गया है। इस उद्यानमें नेत्रोंका रंजन बहुत अच्छी तरह होता है। कर्णोंका रंजन होनेके लिए भी बागके पासही एक 'बैंडस्टैण्ड' की योजना की गई है। वहाँ हफ्तेमें तीन

दिनोंपर सुन्दर वाद्य सुनाई देते हैं, जिन्हें सुनकर रंजनप्रिय जन-समुदायको बड़ा संतोष होता है। इस बागसे अलीमर्दानकी नहर बह रही है। इस जलाशयसे बागको विशेष शोभा प्राप्त हुई है। सुन्दर सरिता अथवा रमणीय सरोवर उद्यानश्रीके प्यारे क्रीड़ा-भवन हैं। इनके बिना उसके विलास पूरे नहीं होते ! अस्तु।

इस बागमें पत्थरका एक हाथी है। उसके पैरोंके पास एक लेख खुदा है, जिसमें लिखा है कि, शाहजहाँ बादशाह सन् १६४५ ईसवीमें ग्वालियर से यह हाथी की मूर्ति लाया। इसके सिवा चाँदनी-चौकमें और विशेष देखने लायक कुछ नहीं है।

काली मसजिद

दिल्ली शहरके चाँदनी-चौकको देखनेके बाद दर्शक लोग शहरके दक्षिणमें काली मसजिदकी इमारत देखनेके लिए उत्सुक होते हैं। यह मसजिद काली है, इसीलिए उसको 'काली मसजिद' नाम मिला है। यह 'तुर्कमन-गेट' के समीप है। इस दरवाजेका नाम 'तुर्कमन' इस-लिए पड़ा कि, यहाँ पर शाह तुर्कमन नामका एक प्राचीन औलिया रहता था। सन् १२४० ईसवीमें उसका देहावसान हुआ। यहाँ पर उसकी कबर है; और 'रज्जब' महीनेकी २४ वीं तारीखको यहाँ एक मेला लगता है। इसी पुरुषके कारण इस दरवाजेको 'तुर्कमन-गेट' नाम प्राप्त हुआ है। अस्तु। काली मसजिदकी इमारत बहुत पुरानी है। यह सन् १३८६ ईसवीमें; यानी फीरोजशाह तुग़लकके समयमें, बनी। बाहरसे यह इमारत दोमंजलीसी दिखाई देती है; परन्तु उसकी कुर्सी बहुत ऊँची है; और उसपर २८ फुटकी उँचाई पर प्रार्थना का स्थान है। मसजिदकी कुल उँचाई ६६ फुट है।

चौथा प्रकरण ।

इन्द्रप्रस्थ

महाभारतकी कौरव-पांडवोंकी कथाओंने जिस इन्द्रप्रस्थका नाम अजर-अमर कर दिया है, और जिसका नाम हिन्दुओंने अनेक बार सुना है, वह सुप्रसिद्ध नगर दिल्लीके दक्षिणमें दो मीलकी दूरी पर है। यहाँ पांडवोंके समयकी धन-सम्पन्न नगरी अब नहीं है। सिर्फ मुसलमानी किलेका कुछ जीर्ण भाग और उसमें कुछ प्राचीन मसजिदें हैं। आज-कल यहां पर न तो वे उत्तुंग देवालय हैं; और न वे रमणीय उद्यान। यहाँकी निर्जन तथा उध्वस्त दशाको प्राप्त—परंतु इतिहासकी दृष्टिसे अत्यंत पवित्र एवं महत्व-पूर्ण—भूमिका अवलोकन करने पर प्रत्येक हिन्दू दर्शकका हृदय गद्‌गद हो जाता है। यह सोचकर, कि हम पांडवोंके इन्द्रप्रस्थमें खड़े हैं, उसे बड़ा गौरव मालूम होता है; और उस सुंदर नगरीकी विपदावस्था को देखकर उसे अत्यंत खेद होता है। पांडवोंकी पुण्यभूमि अवलोकन करनेकी उत्सुकतासे हृदयमें उठी हुई आनन्द-तरंगें क्षणभरमें विलीन हो जाती हैं; और वहाँ जाते ही शोकका साम्राज्य हृदयमें छा जाता है। अस्तु। मनकी यह हालत हो जाती है, तथापि दर्शकोंको इस स्थानके देखनेकी जिज्ञासा विशेष रहती है; और दिल्ली जाने पर उसका अवलोकन किये बिना वे कदापि नहीं रहते।

इन्द्रप्रस्थ नगरका विस्तारपूर्वक वर्णन महाभारतमें दिया है तो भी उसका थोड़ासा वृत्तांत यहां पर दे देना आवश्यक जान है। इस नगरकी कथा इस प्रकार है:—

द्रौपदीका स्वयंवर होनेके बाद, उसके साथ पांडव हस्तिनापु रवाना हुए। तब कौरवराज धृतराष्ट्रके मनमें यह डर पैदा हुआ ज्योंही ये हस्तिनापुरमें आवेंगे त्योंही राज्यके बँटवारेके लिए मेरे में और इनमें झगड़ा शुरू हो जायगा। इसका प्रतिबन्ध क लिए उन्होंने विदुरके द्वारा धर्मराज युधिष्ठिरको यह संदेशा भेजा तुम लोग हस्तिनापुर न आकर वहांसे थोड़ी ही दूर पर जो खांड अथवा इन्द्रवन नामक भारी जङ्गल है, उसको साफ करके वहां एक नया शहर बसाओ और वहीं पर तुम अपने भाइयोंके साथ करो। धर्मराज धर्मराज ही थे। उन्होंने इस बातको तुरन्त स्वी कर लिया; और इन्द्रवन को जलाकर, तथा साफ करके, वहाँ प बड़ा भारी नगर बसाया। इसीको इन्द्रप्रस्थ अथवा खांड नाम दिया गया। महाभारतमें आदिपर्वके २०७ वें अध्यायमें नगरका बहुत ही सुंदर वर्णन किया गया है। उससे जान पड़ कि, यह नगरी पृथ्वी पर मानो एक इन्द्रनगरीके ही समान उसमें बड़े बड़े मनोहर उद्यान, जलाशय, इत्यादि बने थे। भवनों शोभा अत्यंत निराली थी। हाट, बाट, बाजार, चौक, इ अपनी सम्पत्ति और वैभवमें कुबेरपुरीको भी मात करते थे।

सारांश यह है कि, यह नगरी ऐसी सुंदर और विलक्षण थी कौरवोंसे पांडवों द्वारा मांगे गये ग्रामोंमें उसको अग्रस्थान प्राप्त था। पांडवोंने कौरवोंको यह समाचार भेजा था:—

इन्द्रप्रस्थं वृकप्रस्थं जयन्तं वारणावतम् ।
देहि मे चतुरो ग्रामान् पंचमं किंचिदेव तु ॥

अर्थात् इन्द्रप्रस्थ, वृकप्रस्थ, जयंत, वारणावत—ये चार गांव तो हमें अवश्य दो—फिर पाँचवाँ चाहे जौनसा दे दो। आखिर कौरवोंने पांडवोंको ये गांव न दिये। यही नहीं, किन्तु यहां तक कह दिया कि, हम तो तुम्हें उतनी मिट्टी भी न देंगे जितनी सुई की नोक पर भी आ सके। उसका परिणाम भारतीय युद्ध है।

इसी शहरमें पांडवोंने राजसूय यज्ञ सम्पन्न किया; और मयासुर की बनाई हुई विचित्र सभा इसी शहरमें थी। इस नगरीका नाम महाभारतमें अनेकों बार आया है। इसके अतिरिक्त अन्य चार प्रस्थ भी सिर्फ नाम मात्रके लिए मौजूद हैं। उनके स्थान दर्शकोंको दिखलाये जाते हैं। इन प्रस्थों अथवा पतोंके नाम इस प्रकार हैं:— पानीपत, सोनपत, तिलपत और बाघपत। ये सब दिल्लीके मैदानमें जमनाके पश्चिमी किनारे पर बसे हुए थे।

इन्द्रप्रस्थमें पांडवोंके समय की नगरीका अब कुछ भी अंश शेष नहीं रहा है। तथापि इस स्थानकी पवित्रता अभी तक मौजूद है; और श्रद्धालु हिन्दू जनोंकी दृष्टिसे जो अत्यन्त पूज्य क्षेत्र हैं उनमें वह अभी तक गिना जाता है। पद्मपुराणमें इन्द्रप्रस्थकी महिमाका वर्णन करते हुए कहा है:—

यमुना सर्वसुलभा त्रिषु स्थानेषु दुर्लभा ।
इन्द्रप्रस्थे प्रयागे च सागरस्य च संगमे ॥

अर्थात् "यमुना सर्वत्र सुलभ है; परन्तु इन्द्रप्रस्थ, प्रयाग और समुद्र-संगम, इन तीन स्थानोंमें दुर्लभ है।" वहाँ पर यमुनाके किनारे

'निगमोद्बोध' नामक तीर्थ तो बहुत प्रसिद्ध है; और वहाँ यात्री जाया करते हैं। इस तीर्थके अतिरिक्त यहाँ पर छोटे छोटे तीर्थ देवता अनेक हैं।

दिल्ली शहरसे जब हम इन्द्रप्रस्थ देखनेके लिए जाते हैं, तब हमें 'लाल-दरवाजा' नामक एक बहुत बड़ा प्राचीन दरवाजा मि है। यह शेरशाहकी राजधानीका एक प्रसिद्ध दरवाजा था। दरवाजेके सामनेकी ओर हुमायूँ बादशाहका बनवाया हुआ 'पु किला' देख पड़ता है। यही प्राचीन इन्द्रप्रस्थ है। इस कि हुमायूँ बादशाहने "दीने-पनाह" नाम दिया था। हुमायूँ जब किलेसे भाग गया, तब उसके प्रतिपक्षी शेरशाहने इस किलेका शेरगढ़ अथवा शाहगढ़ रखा था। प्रथमतः सन् १५३३ ई हुमायूंने इस किलेको बनवाना शुरू किया; और फिर इसके वर्ष बाद शेरशाहने उसके आसपास उत्तम कोट बनवाकर अ सुशोभित कर दिया। इस कोटका घेरा लगभग एक मीलका इस किलेके मध्यभागमें, यानी इन्द्रप्रस्थकी भूमिपर, अब राजम के सुवर्ण-कलश नहीं चमकते; बल्कि उस पुण्यभूमि पर अ जनोंकी पर्णकुटिकाएँ मात्र दृग्गोचर होती हैं!

इस किलेमें 'किलाकोना मसजिद' और 'शेरमन्दिल' ना दो प्राचीन दर्शनीय इमारतें हैं। इनमें पहली इमारत लाल और संगमरमरके पत्थरकी बनी हुई है; और उसकी रचना कौशलकी है। यह पठान बादशाहोंके शासनकालमें, सन् १ ईस्वीमें तैयार हुई। शिल्प-कला-विशारदोंकी दृष्टिसे इसकी बहुतही श्रेष्ठ है; और हिन्दुस्तानकी शिल्पकलाके इतिहासके

यिता मिस्टर फर्ग्युसनने इसकी मुक्तकंठसे प्रशंसा की है। उन्होंने लिखा है कि, इटलीके निवासी, जिस तरह वेनिसके 'कँपनॉइल' नामक अत्युच्च राजमहलको अपनी राजसत्ता तथा विजयवैभवका दर्शक समझते थे, उसी प्रकार पठान लोग इस मसजिदके अत्युच्च मीनारको, प्रार्थनामन्दिरका सिर्फ एक भाग ही न मानकर, अपने अभ्युदय और राजसत्ताका कीर्तिस्तंभ मानते थे। उनका धर्मोपदेशक इस मीनार परसे सब लोगोंको, प्रार्थनामें सम्मिलित होनेके लिए, बड़े ताल-सुरसे, पुकारा करता था। उस समय बादशाहको भी अपना काम-काज छोड़कर महलोंसे शीघ्र ही वहाँ जाना पड़ता था। हुमायूँ बादशाह इस मसजिदके निकट शेरमन्दिल नामक राज-प्रासादमें रहा करता था। एक दिन नियमानुसार काजीजीने इस मीनार पर चढ़कर बादशाहको प्रार्थनाके लिए बुलाया। बादशाह उसी समय जल्दीमें उठकर दौड़ा, जिससे ज़ीनेकी एक सीढ़ीसे उसका पैर फिसल पड़ा, उसे भयङ्कर चोट आई; और उसीमें सन् १५५६ ईस्वीके जनवरी महीनेकी २६ वीं तारीखको उसका अन्त हो गया!

इन्द्रप्रस्थमें दिखाई देनेवाले उपर्युक्त मुसलमानी ऐतिहासिक स्थानोंको अवलोकन करनेसे दर्शकोंको एक प्रकारका उद्वेगजनक दृश्य दिखाई देता है। जहाँ खड़े होकर अर्जुनने अपने गाण्डीव धनुषसे इन्द्रप्रस्थ नगरीके कोटकी रक्षा की, वहाँ अब 'किलाकोना मसजिद' खड़ी हुई है! जिस महलमें भगवान् श्रीकृष्ण और पाँडवोंकी कल्याणकारी मंत्रणाएं हुआ करती थीं, उस महलके ठौर पर अब शेरमन्दिल अथवा शेरशाहका महल खड़ा है! इस महलके

सामने आजकल जो गिरी हुई जगह दिखाई दे रही है, वं जगह राजसूय यज्ञका महोत्सव हुआ था, जिसका वृत्तान्त वहाँ लोग अब तक बतलाया करते हैं! निस्सन्देह, विचारशील पुरु लिए इन्द्रप्रस्थका यह घोर परिवर्तन अत्यन्त विलक्षण है! अहा कालचक्रकी महिमा कितनी अगाध है, सो हमें इन्द्रप्रस्थ नगरी इस विपर्याससे अच्छी तरह मालूम होती है। जहाँ अनेक प्र की राजनैतिक मंत्रणाएं हुईं, जहाँ अनेकों राज्य-क्रान्तियाँ हु जहाँ लक्ष्मी मूर्तिमान् वास करती थी, जहाँके विषयमें कहा ग है कि:—

रम्याश्च विविधास्तत्र पुष्करिण्यावनावृताः ।
तडागानि च रम्याणि बृहन्ति सुबहूनि च ॥ १ ॥

जहाँ रत्नोंका तेज चमकता था; और शस्त्रोंकी दिव्य ज्योति च चमाती थी, वहाँ अब दो यवन-मन्दिर अपने गतवैभव पर शो करते हुए खड़े हैं! दिल्लीका 'पुराना किला' अपने नामके अनुस पुराना होकर शनैः शनैः विनाशको प्राप्त हो रहा है; और वहाँ सारा भूप्रदेश निर्जन होकर भयानक बन रहा है! अहा! उसकी य दशा देखकर किसका हृदय दुःखसे न भर जायगा? अहा किसी सहृदय आंग्ल कविने क्या ही अच्छा कहा है:—

"The Niobe of nations! There she stands,
Childless and crownless, in her voiceless woe,
An empty urn within her wither'd hands,
Whose holy dust was scatter'd long ago;
The *Pandawa's* tomb contains no ashes now;
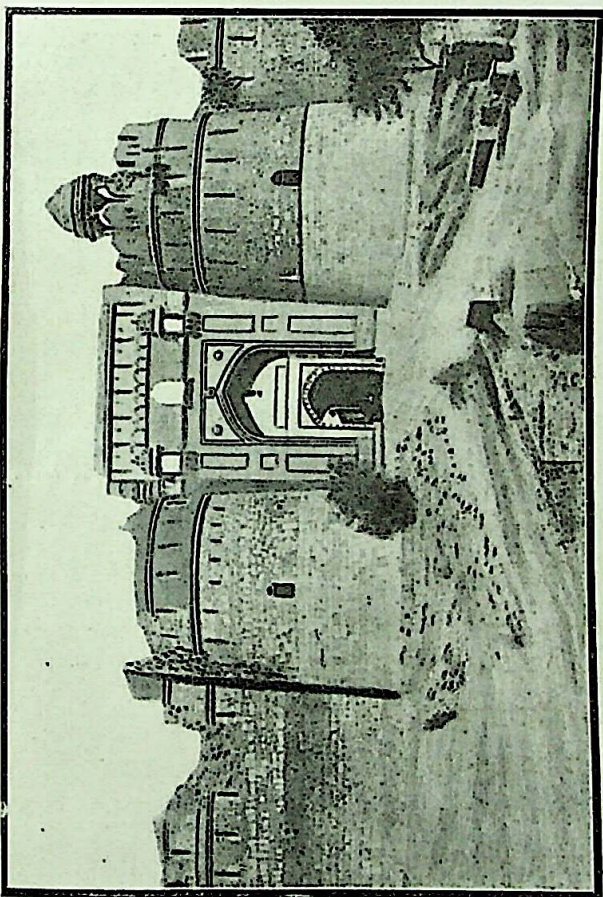
पुराना क़िला।

The very sepulchres lie tenentless,
Of their heroic dwellers: dost thou flow,
Old *Jumna* ! through a marble wilderness ?
Rise, with thy *azure* waves, and mantle her distress."

अर्थात् हे दुखी राष्ट्र ! आज तू पुत्रहीन और राज्य-श्री-हीन वर्तमान है। आज तेरे अधिकार में कोई भी वस्तु नहीं है। तेरी पवित्र सम्पत्ति शताब्दियों पूर्व नष्ट हो चुकी। पांडवोंकी समाधिकी राख भी बाकी नहीं है। उनका अपना भवन निर्जन पड़ा है। वहाँके शूरवीर निवासियोंका पता भी नहीं है। हे बूढ़ी जमना ! क्या आज तू जनशून्य संगमरमर की पहाड़ियोंमें बहती है ? उठ, खड़ी हो; और इसके दुखोंको दूर कर !

पांचवां प्रकरण

दिल्लीके आसपासके स्थान

हुमायूँ का मकबरा

इन्द्रप्रस्थ नगरी अथवा पुराने किलेका अवलोकन करनेके यात्रीगण बहुधा हुमायूँ बादशाहकी कबर देखनेकेलिए आते उस स्थलसे यह एक मीलके अन्तर पर है। वहाँसे इधर आते बीच में 'लाल बंगला' नामकी एक इमारत मिलती है। यहां हुमायूँ और शाहआलम बादशाहकी रानियोंकी कबरें हैं। 'अरबकी सराय' नामकी एक छोटीसी बस्ती है। इसके दरवाजे दर्शनीय हैं। इस गांवको हुमायूँ बादशाहकी प बसाया था। यहाँ पर अरब लोग रहा करते थे। इसी लिए स्थानका 'अरबकी सराय' नाम पड़ा है। यहाँसे हुमायूँ ब शाहकी कबर बिलकुल समीप है।

इस मकबरेमें प्रवेश करते समय दूसरे दरवाजेके पास एक ले देख पड़ता है। उससे यह मालूम होता है कि, इस इमारत हमीदा बानू बेगम, उर्फ हाजी बेगम नामक हुमायूँ बादशाह रानीने, अपने पतिके स्मारकमें, बनवाया। इस इमारतका क सोलह वर्ष तक जारी रहा; और इसके बनवानेमें पन्द्रह लाख रु खर्च हुआ। स्वयं हमीदा बानू बेगम और राजघरानेके अन्य

एक पुरुषोंकी कबरें भी यहीं पर हैं। यह इमारत मुगल बादशाहत की बिलकुल प्रारम्भिक शिल्प-कलाका नमूना है। यह इमारत चौकोन है, और इसके चारों ओर अठपहलू कोने हैं। इसका मध्यभाग अठपहलू है; और उसपर एक अर्धगोलाकृति शिखर, अथवा गुम्बज है। उसके चारों ओर चार अठपहलू मीनार हैं। इस इमारत का ढांचा अत्यन्त उत्तम है; और इसीके नमूने पर आगरे का ताजमहल बना है। इस इमारतमें और ताजमहलमें इतना अन्तर है, जितना एक ग्रामीण स्त्री और एक राजकुलकी रूप-ऐश्वर्य्य-संपन्न भुवनसुन्दरीमें होता है। ताजमहलमें जो कल्पना-शक्ति, कवित्व और प्रतिभा है, वह इसमें बिलकुल ही नहीं है। तो भी यह कबर बहुत अच्छी है; और अपनी सादगीसे ही दर्शकों के चित्तको आकर्षित करती है।

हुमायूँ बादशाहकी कबरकी सादगीमें भी एक प्रकारका कौतुक है। अर्थात् वह सादगी अत्यन्त मनोरम और दर्शनीय है। सिकन्दरामें अकबरकी कबर और शहादरामें जहाँगीरकी कबर भी सादगीमें प्रसिद्ध है। परन्तु उनकी सादगीकी अपेक्षा इस इमारत की सादगी अधिक मनोहारी है। इस इमारतमें भी ठौर ठौर पर संगमरमरका काम किया गया है। उससे इमारतकी शोभा और भी बढ़ गई है। पठान बादशाहोंने जो इमारतें बनवाईं उनमेंसे कुतुबमीनारको छोड़कर, बाकी सब इमारतें, इस मुगल शिल्पकलाके पहले कामके आगे, रद हो जाती हैं। कनिंगहम साहबका कथन है कि, इस इमारतके शिल्प-कार्यमें प्राचीन शिल्प-कार्यकी अपेक्षा कुछ अधिक नवीन सुधार हुए हैं। वे सुधार ये हैं कि मूल

इमारतके चारों कोनों पर चार सुन्दर मीनारोंकी इसमें कल्पना। गई है; और इमारतके गुम्बजोंकी बैठक चौड़ी नहीं की गई। यह इमारत बहुत साफ और बड़ी है, अतएव दूरसे बहुत सुन्दर दिखाई देती है; परन्तु ताजमहल जैसा साफ और हवादार है, वैसा यह नहीं है।

ऊपर कहा है कि, हुमायूँ बादशाहकी प्रिय पत्नी, प्रतापी अकबर बादशाहकी माता, हमीदा बानू बेगमने इस कबरको बनवाया और उसकी कबर भी इसी इमारतमें है। इस बेगमका अपने पति पर बड़ा प्रेम था; और इसलिए दर्शकोंकी दृष्टिमें वह यहां अपने पतिके सन्निध अब भी बराबर निवास करती है।

इसी इमारत में दारा, फरुखशियर, रफीउद्दौला, आलमगीर, इत्यादि बादशाहोंकी कबरें हैं। इन सबमें सिर्फ हुमायूं बादशाहकी कबर ही विशेष हृदयाकर्षक दिखाई देती है। कबरें उन बादशाहोंकी योग्यताको देखते हुए बिलकुल ही साधारण हैं। सच है, जिन्होंने कुछ भी सुकर्म्म नहीं किये, जिनके शासनमें प्रजाका कल्याण नहीं हुआ, अथवा जिन्होंने दूसरोंके साथ थोड़ा भी उपकार नहीं किया, उनके स्मारक यदि धुँधले हों, तो इसमें आश्चर्य्य नहीं है।

शेख निजामुद्दीन औलियाकी दरगाह

दिल्लीमें शेख निजामुद्दीन औलियाकी दरगाह बहुत प्रसिद्ध है। शेख निजामुद्दीन औलिया मुहम्मद तुग़लकके ज़मानेमें, सन् १३ ईसवींके लगभग, एक नामी साधु पुरुष हो गया है। यह महात्मा

अपने महान् साधुत्वके लिए प्रसिद्ध है। यह फरीदुद्दीन गुंजशक्कर नामक एक सुप्रसिद्ध औलियाका चेला था। गुंजशक्कर औलिया बड़ा अलौकिक पुरुष था। कहते हैं कि, यह साधु मंत्रके जोर पर मिट्टीके ढेलेकी शक्कर बना देता था। इसकी गुरु-परम्परा अजमेरके मुईनुद्दीन चिश्ती नामक प्रसिद्ध साधु तक पहुँचती है। मुईनुद्दीन चिश्ती अजमेरमें मुसलमानोंका अत्यन्त वंद्य और परमपूज्य साधु था। यह परम्परासे निजामुद्दीनका चेला था। इसलिए लोगोंको इसमें बड़ी श्रद्धा थी। शेख निजामुद्दीन औलिया बड़ा दानशूर था; और उसका खर्च किसी राजासे भी अधिक रहा करता था। चाहे इस कारणसे हो कि, लोगों पर इसका बड़ा प्रभाव था; और चाहे अन्य किन्हीं कारणोंसे हो, तुगलक बादशाह इससे बहुत द्वेष करता था। इसलिए दिल्ली जाकर इस औलियाके महत्वको सदाके लिए नष्ट कर देनेका उसने मनसूबा बाँधा। औलियाके शिष्योंको जब यह मालूम हुआ कि, बादशाह अपनी बड़ी भारी सेनाके साथ हमारे गुरुजी पर आक्रमण करनेके लिये आ रहा है, तब गुरुजीके पास गये; और हाथ जोड़कर बोले, "महाराज, बादशाह आपसे नाराज है; और वह आप पर चढ़ाई करनेके लिए आ रहा है, अतएव आप शीघ्र ही दिल्लीको छोड़ दीजिए।" इस पर इस औलियाने अत्यन्त शान्ति के साथ उत्तर दिया कि, "दिल्ली दूर अस्त"—यानी दिल्ली अभी बहुत दूर है। जब बादशाह दिल्ली आ जायगा, तब देखा जायगा। चमत्कार यह हुआ कि, बादशाह दिल्ली आ ही न पाया। उसके दिल्ली आनेके पहले ही उसके पुत्रने उसका वध कर डाला! भावुक और

श्रद्धालु जनोंकी समझ है कि, बादशाह इस साधु पुरुषके
हरण करनेकी दुष्ट बुद्धिसे आ रहा था, इसी लिए उसको
प्रायश्चित्त मिला। स्लीमन साहबकी राय है कि, यह साधु
का नेता था; और उसीकी सम्मति से बादशाह का खून हु
जो हो, इसमें सन्देह नहीं कि, अब तक इस साधुके वि
लोगोंकी असीम श्रद्धा है; और उनकी दृष्टि से वह बड़ा पू
इस साधुके कहे हुए 'दिल्ली दूर अस्त' ये शब्द आजक
कहावतके रूपमें बदल गये हैं कि, "दिल्ली दूर है।" अँग
भी इसी अर्थकी एक कहावत है। वह यह है:—
'There is many a slip between the cup and the

अस्तु। यह साधु सन् १३२४ ईस्वीमें, लगभग ब्याने
का होकर, परलोक सिधारा। इसी साधुकी कबर पर यह
बनी हुई है; इस लिए इसको निजामुद्दीन औलियाकी दरगाह
हैं। यह दरगाह भी दिल्लीमें एक दर्शनीय स्थान है।

निजामुद्दीन औलियाकी दरगाहके पास एक छोटासा गांव
हुआ है, जहां प्रति वर्ष एक बड़ा भारी मेला हुआ करता
दरगाहके प्रवेश-द्वार पर सन् १३७८ का सन् खुदा हुआ है।
को फीरोजशाह तुगलकने बनवाया। इसके पास एक
तालाब है, जो बहुत पुराना है। लोगोंका कहना है कि इस
याके शापसे उसका पानी खारा हो गया है।

मुख्य दरवाजेसे अन्दर जानेपर कुछ छोटी छोटी कब्रें
मसजिदें मिलती हैं। वहीं पर शाहजहाँ बादशाहकी
कोकिलादेवी (बाई) की कबर है। यह कबर बड़ी सुन्द

यहाँ पर पास ही एक बावड़ा है। उसका नाम 'चश्मे-दिल-खुश' है।

इस बावड़ी पर हिजरी सन् ७१३, यानी ईस्वी सन् १३१२ खुदा है। यहाँ पानीमें एक मेहराब है। कहते हैं कि, उसके द्वारा मुँहारेके अंदर पानी ले गये हैं। अस्तु। वहाँसे फिर दो दरवाजे मिलते हैं। उनसे जानेके बाद भीतर मुख्य दरवाजा मिलता है। यह इमारत दूर से बहुत ही सुंदर दिखाई देती है। इसकी मेहराबें, उनकी नक्काशी और मुख्य गुम्बज, सभी बहुत उत्तम हैं। यह इमारत बिलकुल मुसलमानोंके ताजियोंके समान है। इसके बीचोंबीच निजामुद्दीन औलियाकी मुख्य कबर है। यह कबर बहुत पुरानी है; और उसकी इमारत कुछ अकबरके जमाने में और कुछ शाहजहांके जमानेमें बनाई गई। यहाँकी मुख्य कबर पर जरीके कीमती वस्त्र और पुष्पमालाएं चढ़ाते हैं; और बहुतसे मुसलमान भक्तिपूर्वक वहां पर दान-धर्म करते हैं। यहाँ पर औरङ्गजेब बादशाहने मजलिसखाना नामका एक महल बनाया है। इस इमारत पर कोई विशेष लेख खुदा हुआ नजर नहीं आता। परन्तु दो स्थानों पर "किब्लेगाह-ए-खास-ओ-आम" (सब लोगोंके लिए प्रार्थना का स्थान) और "कबर-ए-शेख" (साधुकी कबर) लिखा है। यहांका वार्षिक उत्सव देखने लायक होता है।

निजामुद्दीन औलियाकी दरगाहके पास ही जमातखाना मसजिद नामकी एक दूसरी इमारत है। यह भी बड़ी सुन्दर और दर्शनीय है। कहते हैं कि, इसको खिजरखांने बनवाया था। यहांकी कारीगरी भी बहुत उत्तम है। इस इमारत के दरवाजे पर हिन्दू

देवताओंकी भी मूर्तियाँ हैं। इमारतके मध्यभागमें एक सोने
प्याला टंगा हुआ है। कहते हैं कि, यह बहुत पुराना है।

जहानारा बेगमकी कबर

शेख निजामुद्दीन औलियाकी दरगाहके दक्षिणमें कई बड़े
लोग तथा राजकुलके नरनारियोंकी कबरें हैं। इन कबरोंमें शाहज
बादशाहकी प्यारी बेटी जहानारा बेगम की कबर है। यह ब
पितृ-भक्त थी; और शाहजहाँके कैदमें रहते समय बराबर अन्त त
उसकी सेवामें रही। इसकी कबर बिलकुल सादी है; और उस
कोई आच्छादन नहीं है, प्रत्युत, उसके मध्य-भागमें दूब लगानेके लि
जगह छोड़ दी गई है। इस कबरका मुख्य पत्थर छै फुट लम्बा है
और उसके ऊपर अरबी भाषामें "परमेश्वर ही जीवन औ
परमेश्वर ही पुनर्जन्म" लिखा है। उसके नीचे कुरानका सांकेति
अक्षर 'मिम्' लिखा है। उसके नीचे फारसी भाषामें निम्नलिखि
अर्थका मजमून है :—

"Save the green herb, place naught above m
head,
Such pall alone befits the lowly dead;
The fleeting poor Jehanarah lies here
Her sire was Shah Jahan and Chist her Pir,
My God the Ghazi monarch's proof mak
clear."

अर्थात् "सिवा हरी दूबके मेरे ऊपर—अर्थात् मेरी समाधि प
और कुछ न रखना। खाकसारके लिए यही काफी है। नश्वर औ
ग़रीब जहानारा यहाँ निवास करती है। उसके पितृ शाहजहाँ औ
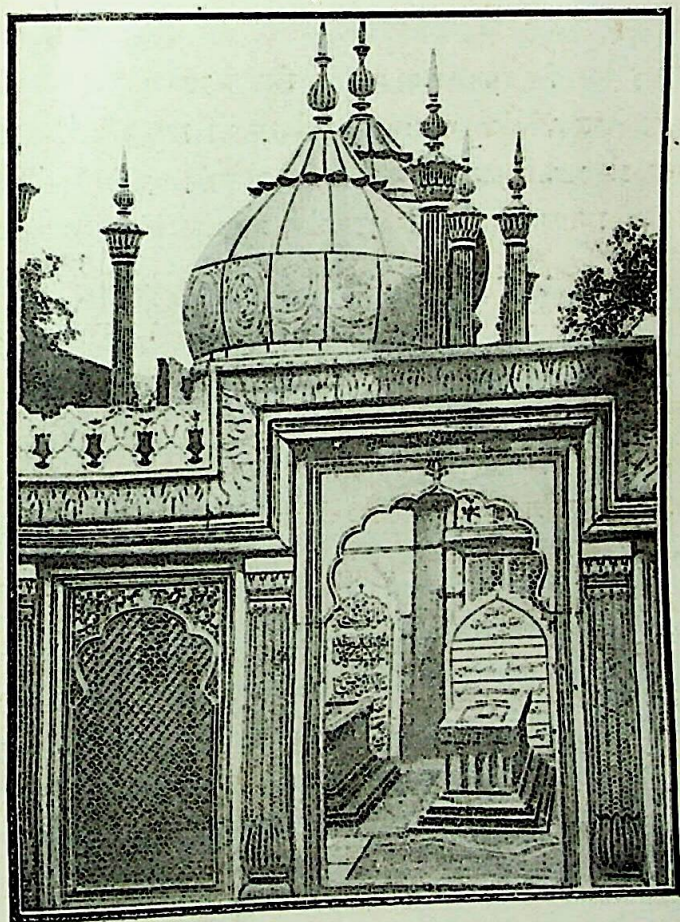
जहाँनारा का मक़बरा।

गुरु चिश्ती थे। परमात्मा राजा के प्रमाणको और भी सिद्ध करे।" इस राजकन्याकी यह लीनता और रसिकता देखकर दर्शकोंको 'विनयो हि सतिव्रतम्' वाली उक्तिका स्मरण हो आता है; और वे क्षणभरके लिए कौतूहलसागरमें निमग्न होजाते हैं। इस कबरपर दिये गये सन्से जान पड़ता है कि, यह सन् १६८१ ईसवीमें बनाई गई।

जहानाराकी कब्रके बाईं ओर शाहआलम बादशाहके लड़के मिर्जा अलीगोर, और दाहनी ओर अकबरशाहकी दूसरी बेटी जमीलुन्निसां की कबर है। इन कबरोंके पास, पूर्व ओर मुहम्मदशाह बादशाहकी कबर है। यह अभागी बादशाह सन् १७४८ ईसवीमें मृत्युको प्राप्त हुआ। मयूरसिंहासन पर बैठनेवाला अन्तिम बादशाह यही था। इसकी कबरके पास उसकी बेटीकी कब्र है, जो नादिरशाहके बेटेको ब्याही थी। इस कब्रका प्रवेशद्वार संगमरमर का बना है; और उसपर बेलबूटोंका काम बहुत बढ़िया किया गया है। इसके नजदीक एक तीसरी कबर है, जो दूसरे अकबरशाहके लड़के शाहजादा जहाँगीर की है। यह लड़का पागल था। इसने दिल्लीके रेजीडेन्ट मिस्टर सेटन पर गोली चलाई थी, जिससे इसको इलाहाबादमें लाकर कैद किया था।

खुसरो कविकी कबर।

इन स्थानोंको देखनेके बाद, मुख्य आँगनमें आने पर, 'चबूतरा-यारानी' और खुसरो कविकी कबर, ये दो रमणीय स्थल दृष्टि पड़ते हैं। इनके सिवा, वहां पर और भी अनेक साधु-सन्तोंकी

कबर हैं। "चबूतरा-यारानी" पर निजामुद्दीन औलिया और उसके मित्र लोग बैठा करते थे। इसी लिए उसको 'मित्रोंका चबूतरा' नाम प्राप्त हो गया है। अमीर खुसरू हिन्दुस्तानका एक विख्यात कवि था। उसकी मधुर कविताके कारण उसे "मधुरभाषी तोता" नाम प्राप्त हुआ था। उसकी कबर पर 'अदीम्-उल-मिसल' यानी 'अद्वितीय पुरुष' ये शब्द भी लिखे हैं। इस नामसे फारसी भाषामें हिजरी सन् ७२५ सिद्ध होता है। यह उसकी मृत्युका सन् (१३२४ ईसवी) है। अमीर खुसरो निजामुद्दीनका प्रिय मित्र था। इसने मुहम्मद तुगलकके राजमहलमें चारों ओर भ्रमण करके अनेक प्रासादिक पद्य तैयार किये हैं। कवितादेवी उसपर पूर्ण प्रसन्न थी। तुगलक बादशाहके राजमहलमें गुजरातके राजाकी देवलदेवी नामकी एक लावण्यवती कन्या थी। कहते हैं कि, यही इस कविकी कवित्व-स्फूर्तिका मुख्य कारण है।

कहते हैं कि, इस सौन्दर्य्य-लतिका पर उसने बहुत सुन्दर कविताएँ बनाई हैं। इसकी कविताएँ बहुत प्रेमपूर्ण और मधुर हैं; और अब तक लोगोंके मुँहसे सुनी जाती हैं। हिन्दुस्तानमें अनेकों कवि हो गये हैं; और उनके काव्योंने उनकी कीर्तिको अमर कर दिया है; परन्तु उनकी कबरें या समाधियाँ बहुत ही कम दिखाई देती हैं। गीतगोविन्दके रचयिता कवि जयदेवकी समाधि पूर्व-प्रान्तमें सुनी जाती है; और कवि खुसरोकी कबर दिल्लीमें प्रत्यक्ष देखी जाती है। इनके सिवाय हिन्दुस्तान के कवियोंके स्मारक-मन्दिर और कहीं भी नहीं पाये जाते। एक संस्कृत कविका सुभाषित है :—

जयन्ति ते सुकृतिनो रससिद्धाः कवीश्वराः।
नास्ति येषां यशःकाये जरामरणजं भयम्॥

अर्थात् उन रससिद्ध सुकृती कविश्वरों की जय हो, कि जिनके यशरूपी शरीरके लिए जरा और मरणका कभी भय नहीं है।

परन्तु इससे यह नहीं कहा जा सकता कि, हमारे कवियोंके लिए किसी प्रकारके स्मारककी आवश्यकता नहीं है। संस्कृत कवि कालिदास, भवभूति, दंडी, बाण अथवा हिन्दी कवि तुलसीदास, सूरदास, केशवदास, बिहारी, इत्यादिके नाम पर यदि आज कोई स्मारक होते, तो उनसे दर्शकोंको निस्सन्देह वहुत आनन्द होता। आज भी दिल्ली में अमीर खुसरोकी मनोरम कबर देखनेसे जान पड़ता है कि, जैसे उसकी सुन्दरता दर्शकोंको, इस कविके काव्य-माधुर्यका स्मरण दिलानेके लिए, बुला रही है; और स्वयं क़बरके भीतरी मंडपमें जाने पर ऐसा भास होता है कि, मानो उससे निकलनेवाली मंजुल प्रतिध्वनि किसी संस्कृत कविकी वाणीमें यह कह रही है कि:—

वाणी ममैव सरसा यदि रंजयित्री
न प्रार्थये रसविदामवधानदानम्।
सायंतनीषु मकरन्दवतीषु भृंगाः
किं मल्लिकासु परमंत्रणमारभन्ते॥

अर्थात् मेरी कवितामें यदि रस है; और पढ़नेवालेको यदि उससे आनन्द होता है, तो मैं रसिक लोगोंसे उसकी तरफ़ ध्यान देनेकी प्रार्थना नहीं करता। सायंकालको भौंरा पुष्परस से भरी हुई मल्लिकाकी तरफ आनेके लिए क्या किसीकी सलाह लेता है?

अस्तु। कवि खुसरोकी कबरका दर्शन करके बाहर आनेके बाद थोड़ी ही दूर पर दौरानखां और आजमखाँ नामक दो प्रसिद्ध पुरुषोंकी कबरें हैं। इनके बाद वहाँ दो फुटके अन्तर पर 'चौंसठ खम्भा' नामक एक दरगाह मिलती है। इस इमारतमें चौंसठ खम्भे हैं। इसीलिए इसको 'चौंसठ खंभा' नाम प्राप्त हुआ है। इसकी बनावट और रचना शाहजहाँके समयकी इमारतोंके समान सुन्दर और मनोहारी है। इसे देखनेसे जान पड़ता है कि, मानों यह इमारत 'दीवान-ए खास' नामक सौन्दर्य्य-मन्दिरका पहलेका नमूना ही है। इस इमारतमें सब जगह बढ़िया संगमरमरका काम किया हुआ है। इसका आकार चौरस है। इस इमारतमें अकबर बादशाहके सेनापतिके लड़के अजीमखांकी कबर है। यह अजीमखाँ गुजरातका गवर्नर था। यह प्राचीन धर्म्मका कट्टर अभिमानी था। अतएव इसको अकबर बादशाहका नवीन धार्मिक सुधार पसन्द नहीं था। परन्तु अकबरने कभी उससे किसी प्रकार का आग्रह नहीं किया; और उसको उसके ही मतानुसार चलने दिया। यह मनुष्य बड़ा धर्मात्मा था; और गरीब-गुरबों को सर्वदा अन्नदान किया करता, तथा मुहरें बाँटा करता था। इसलिए उसके विषयमें दिल्लीके गरीब लोगोंमें इस अर्थकी एक कहावत प्रचलित हो रही है कि, "परोपकारी अजीमखां गरीबोंको सिर्फ भोजन ही नहीं देता; किन्तु साथही दक्षिणा भी देता है।" निस्सन्देह, जो सज्जन अपने धनका उपयोग परोपकारमें करते हैं, उनकी कीर्ति अजरामर हो जाती है।

सफ़दर-जङ्गका मकबरा

हुमायूँ बादशाहकी कबरसे अन्त तक जो रास्ता जाता है, उसके सिरे पर नवाब मनसूरखां उर्फ सफदरजंगकी कबर है। नवाब सफ़दरजङ्ग दिल्लीकी राजनीतिका एक प्रसिद्ध सूत्रधार था; और अयोध्याके पहले नवाब सआदतखांके बाद उसकी गद्दीका स्वामी हुआ। यह दिल्ली के बादशाह अहमदशाहका प्रधान मंत्री था। अतएव दिल्लीके राजनैतिक मामलोंमें इसका मुख्य हाथ रहता था। सन् १७५३ ईसवीमें दिल्लीमें इसकी मृत्यु हुई। उसकी यह कबर उसके पुत्र, अयोध्याके तीसरे नवाब सुजाउद्दौलाने, तीन लाख रुपये खर्च करके, बनवाई है। इस इमारतमें सफदरजङ्ग के साथ उसकी बेगमकी भी कबर है। इस कबरकी रचना ताजमहलके नमूने पर की गई है; और इसके मध्य-भागमें संगमरमरका काम, तथा उसमें लालरंगकी कारीगरी बहुत शोभायमान देख पड़ती है। इस इमारतके चारों कोने जितने सुन्दर होने चाहिएं, उतने सुन्दर नहीं हैं—तोभी, इसमें सन्देह नहीं, कुल मसजिद दर्शनीय है। इस इमारतके ऊपर चढ़कर देखनेसे आसपासका दृश्य बहुत ही मनोहर दिखाई देता है। यह इमारत ९९ फीट ऊँची है।

सफदरजंगके मकबरेसे कुछ अन्तर पर एक मार्ग जाता है। वहाँ 'हौज-ए-खास' नामका एक स्थान है। यहाँ पर पहले सुलतान अलाउद्दीन खिलजीके समयका एक प्राचीन तालाब था। वहाँ फीरोजशाह तुगलकने सन् १३५४ ईसवीमें एक विद्या-मन्दिर बनवाया था, जिसमें यूसुफ-बिन-फजल-हुसेनी

नामके एक विद्वान् पुरुषको अध्यापक नियत किया था। उसकी कबर अभी तक वहाँपर मौजूद है। उसके पास ही फीरोजशाहका मकबरा है। यह बादशाह सन् १३८८ ईसवीमें मृत्युको प्राप्त हुआ। अवश्य ही, यह कबर उसके बाद बनाई गई है।

राजा जयसिंहकी वेधशाला

सफदरजंगके मकबरेसे पाँच मीलकी दूरीपर कुतुबमीनारके इमारत है। यहाँसे 'अजमेरगेट' की ओर दूसरी सड़क जाती है। उसके दरमियानमें जयपुरके राजा जयसिंहकी वेधशाला है। यह अत्यन्त दर्शनीय है; और उस विद्वान् तथा ज्योतिष-शास्त्रविशारद राजाका एक उत्तम स्मारक है। राजा सवाई जयसिंह हिन्दुस्तानके इतिहासमें एक अद्वितीय रत्न था। यह राजा राजनीति, रणभूमि और पंडितोंकी सभामें एकसा चमकता था। वर्तमान जयपुर नगर इसी राजा ने बनवाया; और वहाँपर अपनी राजधानी नियत की। दिल्लीके दरबारमें इसका अच्छा प्रभाव था; और मराठोंको "चौथ" तथा "सरदेशमुखी" की सनदें दिलाने तथा उनके हितसाधन करनेका अधिकांश श्रेय इसीको है। बड़े बाजीराव पेशवाको मालवेकी सूबेदारी इसीने प्राप्त करा दी थी। इसने ज्योतिष-शास्त्रका अच्छा अध्ययन किया था; और उसके लिए उसने दिल्ली, उज्जैन, काशी, इत्यादि स्थानोंपर वेधशालाएँ बनाई हैं। 'कल्पद्रुम' इत्यादि इसके कुछ ग्रन्थ भी प्रसिद्ध हैं। ऐसे बहुगुणसम्पन्न राजाकी इस वेधशालाको देखकर प्रत्येक दर्शक
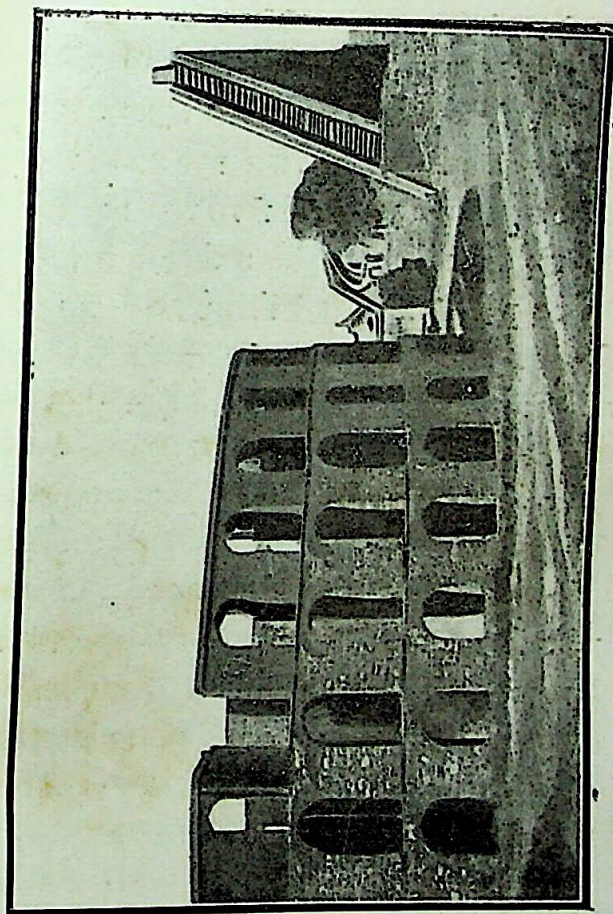
वेध-शाला ।

के हृदयमें आनन्दकी लहरें उमड़ने लगती हैं; और उसकी गुणग्राहकता पर बड़ा कौतूहल होता है।

दिल्लीकी यह वेधशाला अभी तक अस्तित्वमें है। उसका असली नाम 'साम्राट्-यन्त्र' है। परन्तु यह नाम उच्चार करनेमें कठिन मालूम होता है। इसलिए आजकल इसको "जंतर-मंतर" कहते हैं। यह वेधशाला सन् १७२४ ईसवीमें बनवाई गई। ग्रहोंका वेध लेनेके लिए जो शंकुयंत्र तैयार किया गया है, वह जीनेके आकारका है। उसका कर्ण ११८ फुट ५ इंच है। आधार उसका १०४ फुट और लम्ब ५६ फुट ७ इंच है। परन्तु अब यह इमारत बहुत खराब होगई है। इस इमारतके पास एक छायायंत्र बनाया गया है। यह इमारत रोमन लोगोंके नाटकगृहके समान वृत्ताकार है; और उसके बीचमें एक जीना है, जो बराबर छत तक चला गया है। चारों ओर, क्षितिज से एक विन्दु में आनेवाली, अर्धवृत्ताकार मेहराबें बनी हुई हैं। वे वेधशालाकी याम्योत्तर रेषामें एक विशिष्ट अन्तर पर हैं; और वगलकी याम्योत्तर रेषा दिखलाती हैं। ज्योतिष-शास्त्रज्ञोंको वेध लेनेके लिए जिन जिन शास्त्रीय साधनोंकी आवश्यकता होती है, उन सबका यहां अच्छी तरह प्रबन्ध किया गया है। यहाँ पर त्रिकोण और उसके अंश बहुत अच्छी तरह लगा रखे हैं, जिनसे दिनका काल-मापन ठीक ठीक होता है; और घटिकाओं तथा पलोंका भी ठीक ठीक बोध हो जाता है। इस प्रकारके दो छायायंत्र पास ही पास हैं। इससे जान पड़ता है कि, एकके मापनकी परीक्षा दूसरे में की जाती होगी। इस वेध-शालासे, उसके रचयिताकी विशाल

बुद्धि और ज्योतिषशास्त्रपारंगतताका अच्छा अनुमान होता है। राजा जयसिंहके बाद इस वेधशालाका वैसा उपयोग करनेवाला और कोई मनुष्य नहीं निकला; और इसी कारण इस वेधशालाकी बड़ी दुर्दशा हो रही है। तथापि जो जो विद्वान् पुरुष दिल्लीमें जाते हैं और इस छायाचित्र तथा वेधशालाका दर्शन करते हैं, वे राजा सवाई जयसिंहकी तारीफ किये विना नहीं रहते। वर्तमान समयमें यह इमारत, और उसके पासका माधवगंज नामक गांव, सवाई जयसिंहके वंशज, जयपुर-रियासत के वर्तमान अधिपति, के अधिकारमें है। आशा है, आप अपने पूर्वजोंके इस अत्युत्तम स्मारकको सुरक्षित रखेंगे। क्योंकि अपने पूर्वजोंकी कृतिकी रक्षा करना भी एक पवित्र कार्य है।
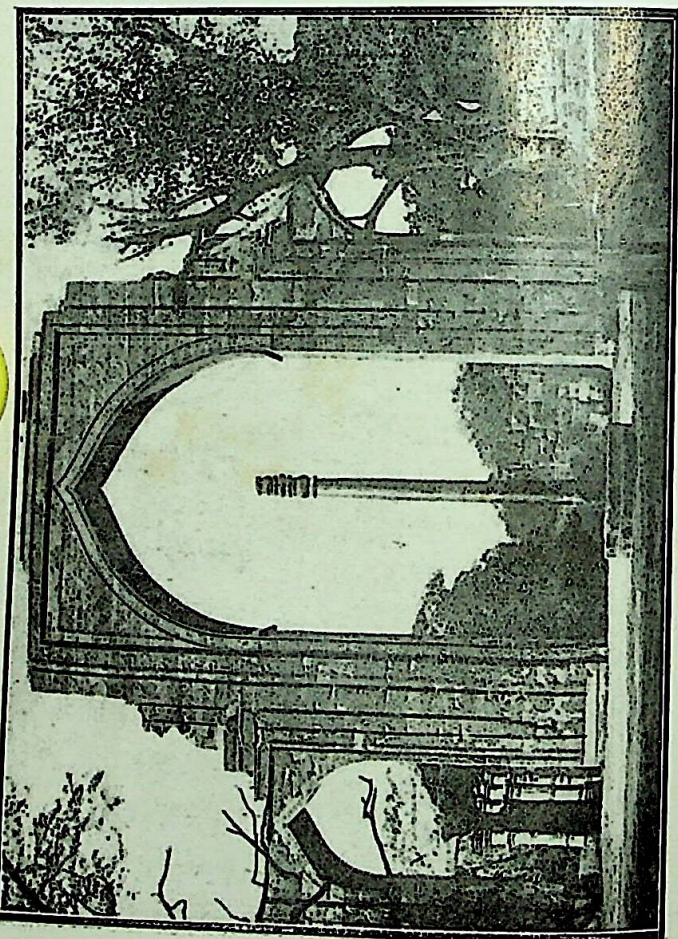
लोह-स्तम्भ ।

छठा प्रकरण

हिन्दू राजाओंके प्राचीन स्मारक

लोहस्तम्भ

जब हम कुतुबमीनार देखनेके लिए जाते हैं, तब वहाँके विस्तीर्ण भूप्रदेश पर हमें अनेक प्राचीन और जीर्ण किले, कोट और इमारतें दिखाई देने लगती हैं। ये सब उस समयके प्राचीन स्मारक-चिन्ह हैं, जब कि दिल्लीमें हिन्दू राजाओंकी स्वतंत्र राज्यसत्ता और राज्यवैभव मौजूद था। अब इसमें कुछ भी सन्देह नहीं रहा है कि, यहाँ पर उन शक राजाओंकी वृहत् राजधानी थी, कि जिनको ईसवी सन्के ७८ वें वर्षमें राजा विक्रम ने जीता था। यहाँके लोहस्तम्भसे मालूम होता है कि, सन् ३१९ ईसवीमें यहाँ गुप्त राजाओंकी राजधानी होगी। परन्तु इसके बाद, आठवीं शताब्दीके मध्य तक, अर्थात् तुंबरवंशीय राजा अनंगपाल तक, यहाँ राजधानी थी, अथवा नहीं, यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता। कनिंगहम साहबके लेखसे यह जान पड़ता है कि, राजा अनंगपाल जब तक अवतीर्ण नहीं हुआ था, तब तक यह राजधानी विध्वंसावस्थामें थी। इससे जान पड़ता है कि अनंगपालने इसे फिर बसाया। हां, प्राचीन ऐतिहासिक सामग्रीसे इतना अवश्य सिद्ध होता है कि, दिल्ली में तुम्बर घरानेके राजाओंका राज्य अनेक वर्षों तक था।

यहां तक कि उनकी सत्ता हिमालयसे लेकर विंध्याचल पर्वत तक फैली हुई थी। इस समय जहां कुतुबमीनार और उसके आस-पासका प्रदेश है, वहीं इन राजाओंकी नगरी थी। उन्होंने जो नगरी बसाई; और बादमें चौहान वंशके राजाओंने उसमें जो सुधार किये, उनका सम्पूर्ण स्वरूप आज दिखाई नहीं देता; परन्तु उनके जमानेके कुछ स्मारक अब तक दिखाई पड़ते हैं, उनका संक्षिप्त वृत्तान्त यहाँ दिया जाता है।

यह लोह-स्तम्भ भारतकी अपूर्व अलौकिक वस्तुओंमेंसे एक है। हिन्दुस्तानमें आज तक पीतलकी बड़ी बड़ी मूर्तियाँ और पंचधातुके, छोटे-बड़े सब प्रकारके, पुतले बहुतसे बने थे; परन्तु लोहरसका इतना वृहत् स्तम्भ अब तक किसीने तैयार नहीं किया था। वैज्ञानिक उन्नतिके वर्तमान युगमें ऐसे अद्भुत कार्य चाहे सहजहीमें हो जायँ; परन्तु आश्चर्य्य इस बातका है कि, इतने पुरातन कालमें हमारे भारतवर्षमें ऐसे ऐसे अलौकिक कार्य हुए हैं। यह स्तम्भ अखंड है; और बिलकुल लोहरसका बना हुआ है। इसकी कुल उँचाई २५ फुट है; और धरतीसे वह २२ फुट ऊँचा है। पहले लोग समझते थे कि, यह धरतीमें बहुत नीचे तक गड़ा है। परन्तु सन् १८७२ ईसवी में प्राचीन-वस्तु-अन्वेषकोंने इसकी गहराईका, बड़ी सूक्ष्म दृष्टिसे, निरीक्षण करके यह निश्चित किया कि, इसकी गहराई सिर्फ तीन फुट है। उनका मत यह है कि, धरतीके भीतर, वृक्षोंकी जड़ें, जिस तरह नीचे नीचे जाकर वृक्षके तने को मजबूत बनाती हैं, उसी तरह इस स्तंभके नीचे लोहेकी खपच्चियाँ लगाकर उसे पक्का बनाया है। इस स्तंभका व्यास १६ इंच है। कुछ अन्वेषकोंका अनुमान है कि,

इस स्तम्भका वजन साढ़े सत्रह टनसे भी अधिक है। यह स्तम्भ शुद्ध लोहेका है; और उसका विशिष्ट गुरुत्व ७·६६ है।

इस स्तम्भका मध्य भाग चिकना है; और उसपर निम्नलिखित संस्कृत लेख खुदा है:—

यस्योद्वर्तयतः प्रतीपमुरसा शत्रून्समेत्यागतान् ।
वंगेष्वाहववर्तिनोऽभिलिखिता खड्गेन कीर्तिर्भुजे ॥
तीर्त्वा सप्तमुखानि येन समरे सिंधोर्जिता बाल्हिका ।
यस्याद्याप्यधिवास्यते जलनिधिर्वीर्यानिलैर्दक्षिणः ॥ १ ॥
खिन्नस्येव विसृज्य गां नरपतेर्गामाश्रितस्येतराम् ।
मूर्त्या कर्मजितावनिं गतवतः कीर्त्या स्थितस्य क्षितौ ॥
शान्तस्येव महावने हुतभुजो यस्य प्रतापो महान् ।
अद्याप्युत्सृजति प्रणाशितरिपोर्यत्नस्य शेषः क्षितिम् ॥२॥
प्राप्तेन स्वभुजार्जितं च सुचिरं चैकाधिराज्यं क्षितौ ।
चन्द्राह्वेन समग्रचन्द्रसदृशीं वक्त्रश्रियं बिभ्रता ॥
तेनायं प्रणिधाय भूमिपतिना धावेन विष्णौ मतिं ।
प्रांशुर्विष्णुपदे गिरौ भगवतो विष्णोर्ध्वजः स्थापितः ॥३॥

ये तीन श्लोक, प्रत्येक पंक्तिमें दो चरणोंके क्रमसे, छै पंक्तियोंमें खुदे हैं। ऊपर लिखे हुए श्लोकोंका भावार्थ यह है कि, "यह स्तम्भ मानो उस चन्द्र नामके राजाका भुज ही है कि, जिसने, वंग देश में ऐक्य करके आक्रमण करनेवाले शत्रुओंकी नाकमें दम करके, खड्गसे अपनी कीर्ति लिख रखी है। उस राजा ने सिन्धु नदीके सप्तमुखोंको पार करके बाल्हिक लोगों को जीता। दक्षिणी समुद्र तो उसकी प्रताप-वायुसे अभी तक सुगन्धित हो रहा है। जैसे

किसी बड़े भारी जंगल में प्रज्वलित प्रचंड बड़वानल, प्रायः समस्त जंगलको भस्मीभूत करके शान्त हो जाने पर भी, कुछ अवशिष्ट अवश्य रहता ही है, उसी प्रकार शत्रुओंकी चेष्टाओंको पूर्ण रीतिसे विफल करके, यद्यपि यह राजा खिन्नतासे इस पृथ्वीको छोड़कर, मूर्तिमात्रसे, स्वपुण्यार्ज्जित स्वर्गलोकको चला गया है, तथापि कीर्तिरूपमें वह यहाँ अवश्य वर्त्तमान है। अपने भुजाओंके पराक्रमसे प्राप्त किया हुआ चक्रवर्त्तित्व जिसने चिरकाल तक भोगा, जिसके मुखकी कान्ति पौर्णिमाके चन्द्रके समान है, उस चन्द्रराजने, भगवान् विष्णुके प्रति अपने चित्त को भक्तिपूर्वक अर्पण करके, विष्णुपद नामक गिरि पर, भगवान् विष्णु का यह उच्च ध्वज स्थापित किया है।"

यह राजा चन्द्र कौन है, अथवा कब हुआ, इसका अभी तक निर्णय नहीं हुआ है। इन श्लोकोंमेंसे अन्तिम श्लोकके तीसरे चरणमें 'धावेन' शब्द है। उसके अर्थके विषयमें मतभेद है। कई लोगोंने 'धावेन' का अर्थ किया है—"धाव' नामक राजाने", और कई लोगों का मत है कि, 'धावेन' शब्दकी जगह 'भावेन' शब्द हो सकता है, जिसका अर्थ "भक्तिसे" होता है। ऐसी दशामें यही कहना पड़ता है कि, राजाके नामका निर्णय अभी सन्देहावस्थामें ही है।

इस लोहस्तम्भके विषयमें एक दन्तकथा पहले प्रकरणमें दी जा चुकी है। उसी तरहकी एक दन्तकथा और है। यह दन्तकथा शाहजहाँ बादशाहके यहाँ रहनेवाले किसी खड्गराय नामक कविने लिखी है। उसका सारांश यह है कि, व्यास नामक किसी ऋषि, अथवा ब्राह्मणने, तोमर राजाको पच्चीस अंगुल लम्बी सोने

की एक सलाई दी; और उसको, अच्छे मुहूर्त पर, जमीनमें गाड़ देनेके लिए कहा। तदनुसार उसने सम्वत् ७९२ (सन् ७३६ ईसवीमें) वैशाख वद्य १३ को, अभिजित नक्षत्रमें चन्द्रके रहते समय, उसको जमीनमें गाड़ दिया। उस समय व्यासने उसको यह आशीर्वाद दिया कि "तुमसे राज्य कभी नहीं जायगा। यह खूंटी वासुकी के मस्तक पर गड़ी है।" परन्तु राजाने व्यासके इन वचनोंकी प्रतीति लेने के लिए उस सलाईको उखाड़कर देखा, तो वह रक्तसे भरी हुई निकली। इसपर राजाने अत्यन्त भयभीत होकर उस ब्राह्मणको फिर बुलाया; और सारा समाचार प्रकट किया। उस समय ब्राह्मणने राजाको फिर उस सलाईको गाड़नेकी आज्ञा दी। तदनुसार राजाने उसको गाड़नेका प्रयत्न किया; परन्तु १९ अंगुलसे अधिक वह नहीं गड़ सकी। इस पर उस ब्राह्मणने कहा, "राजा, अब तुम्हारा राज्य बहुत दिन न टिकेगा। इस सलाईकी तरह वह अब ढीला हो गया। वह सिर्फ १९ वर्ष और टिकेगा। इसके बाद चौहान राजा होंगे, और फिर तुर्क लोग राज्य करेंगे।" ब्राह्मणका यह भाषण सुनकर राजा बड़ा संतप्त हुआ; और उस ब्राह्मणको बिदा किया। इसी प्रकारकी दन्तकथाएँ दिल्लीमें लोहस्तम्भ देखते समय सुननेमें आती हैं, जिनको सुनकर दर्शकोंको अत्यन्त कौतूहल होता है।

लालकोट और रायपिथौरा

राजा अनंगपालके नामसे प्रसिद्ध होनेवाला उपर्युक्त लोहस्तम्भ देखकर दर्शकगण आश्चर्यचकित होते हैं कि, इतनेमें उनको चौहान राजाके समयके लालकोट और रायपिथौरा नामक प्राचीन

किले दिखाई देने लगते हैं। ये दोनों इमारतें यद्यपि आज गिरी दशामें हैं, तथापि इनको देखकर चौहान राज्यसत्ताका अब भी स्मरण हो आता है। अहा! कालकी क्या ही अतर्क्य लीला है! इन किलोंमें आजकल बस्ती बिलकुल ही नहीं है, अतएव नितान्त निजन और उदास दिखाई देते हैं। इनमेंसे लालकोटका किला पृथ्वीराजने बनवाया है। इस कोटके एक कोनेसे रायपिथौरा नामक किलेकी दीवारें स्पष्ट दिखाई देती हैं। लालकोट पृथ्वीराजकी राजधानीका कोट था; और उसको मजबूत बनानेके लिए फिरसे यह दूसरा किला बनवाया गया था। लालकोट और रायपिथौराका विस्तार शाहजहानाबाद (नई दिल्ली) से करीब आधेसे अधिक था। लालकोटका घेरा सवा दो मील है, और उसकी दीवारें ऊँची तथा भारी हैं। उसका कोट तीस फुट ऊँचा है; और दीवारोंकी ऊँचाई कमसे कम साठ फुट होगी। इस किले का आधा भाग अब तक मौजूद है, और उसका खंदक तथा मारके की जगहें अच्छी दिखाई देती हैं। उसके बुर्ज प्रायः नष्ट हो गये हैं; तो भी कुछ बुर्जोंके चिन्ह स्पष्ट दिखाई देते हैं। पश्चिम ओर तीन दरवाजे अच्छी तरह पहचाने जा सकते हैं; और जान पड़ता है, उनकी चौड़ाई १७ फुट होगी।

कहते हैं कि, रायपिथौरा नामक किला मुसलमानोंकी पहली चढ़ाईके बाद पृथ्वीराजने बनवाया। इस किलेका घेरा साढ़े चार मील था। परन्तु यह इमारत कुछ जल्दी-जल्दीमें बनवाई गई थी—अतएव, जितनी चाहिए, उतनी मजबूत यह नहीं बन सकी। तथापि कहते हैं कि यह किला बहुत भारी था; और उसमें दस दर-

वाजे थे। उनमेंसे आठ दरवाजोंका अब भी पता लगता है। इस किलेमें हिन्दुओं और बौद्धोंके मिलाकर कुल सत्ताईस मन्दिर थे। उनके हजारों खम्भे और कलश हिन्दू धर्म्मका द्वेष करनेवाले यवन बादशाहोंने छिन्नविच्छिन्न कर दिये। हाँ, उनका दीन स्वरूप अब भी अपने दुर्भाग्यके लिए रो रहा है!

दिल्लीके लालकोटकी तैयारीके विषयमें एक स्थान पर सम्वत् १११७ का उल्लेख है, जिससे जान पड़ता है कि, यह सन् १०६० ईस्वीमें बनवाया गया। इसके बाद रायपिथौरा किला बनाया गया। राजा पृथ्वीराज प्राचीन हिन्दू राजाओंमें श्रेष्ठ थे; और भाट लोगोंने उनके पराक्रमका विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। इस विषयमें चन्द नामक राजपूत भाट (कवि) का 'पृथ्वीराजरासो' बहुत प्रसिद्ध है।

सातवाँ प्रकरण

कुतुबमीनार

भारतमें जो अलौकिक और विचित्र इमारतें पाई जाती हैं, उन्हींमें कुतुबमीनार भी एक है। यह गगनचुम्बित अत्युत्तम इमारत दिल्लीसे ग्यारह मील दूर है। इस इमारतको भूकम्प और विद्युत्-आघातसे यद्यपि थोड़ासा धक्का पहुँचा है, तथापि उन आघातोंसे भी सुरक्षित रहकर वह अब तक अपनी अपूर्वतासे समस्त संसारको चकित कर रही है। यदि पेरिसका 'एफेल टावर' नामक लोहेका मीनार, जो पेरिस-प्रदर्शनीके समय हालहीमें बनाया गया है, छोड़ दिया जाय, तो सारे संसारमें इस मीनारके बराबर ऊँचा मीनार नहीं है। यह इमारत जमीनसे २३८ फुट १ इञ्च ऊँची है। उसके निचले भागका व्यास ४७ फुट २ इञ्च और शीर्षभागका व्यास ९ फुट है। इस मीनारका बिलकुल निचला खंड २ फुट ऊँची कुर्सी पर है, बीच की इमारत २३४ फुट १ इञ्च ऊँची है; और अन्तिम गुम्बजकी उँचाई २ फुट है। इस प्रकार कुल मिलाकर उपर्युक्त २३८ फीट १ इञ्चकी उँचाई होती है। कहते हैं कि, पहले यह मीनार ३०० फुट ऊँचा था; और कुल सात खंडका था। परन्तु आजकल उसके बिलकुल अन्तिम खंड सहित, उसमें केवल पाँच ही खंड हैं।
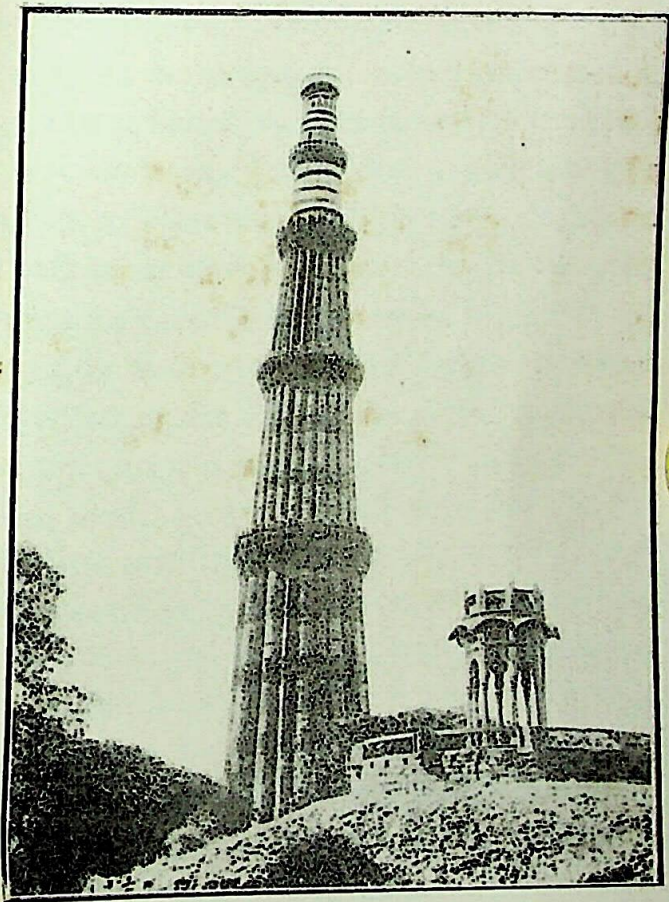
कुतुबमीनार ।

कुतुबमीनारकी इमारत मुसलमान बादशाहोंने बनवाई है; परन्तु यह बृहत् कार्य मुसलमान कारीगरोंने किया, अथवा हिन्दू कारीगरोंने किया, यह एक बड़ा भारी प्रश्न है। गजनीके महमूदने जिस तरह मथुराके राजमहलका सामान और सोमनाथके मन्दिरके दरवाजे गजनी ले जाकर अपना महल सुशोभित किया, उसी तरह संभव है कि, इस मीनार का बहुतसा नक्काशीका काम हिन्दू देवालयोंसे लिया गया हो। यदि यह बात सच है, तो इस इमारतके शिल्पकौशलका बहुतसा श्रेय हिन्दू कारीगरोंको भी देना होगा। कलकत्तेके प्रसिद्ध प्राक्कलीन-वस्तु-अन्वेषक डा० राजेन्द्रलाल मित्रने पिछले दिनों इस विषयमें वाद उपस्थित किया था; और उन्होंने यह सिद्ध किया था कि, यह अलौकिक इमारत हिन्दुओंके कलाकौशलका ही स्मारक है। इस मीनार पर कुछ नागरी अक्षर खुदे हुए हैं, इससे भी इस बातकी पुष्टि होती है कि, इसकी रचनामें हिन्दू शिल्पकारोंका हाथ था। अस्तु। इसकी रचनाके विषय में कुछ भी मतभेद क्यों न हो; परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि, यह इमारत भारतके लिए अवश्य ही एक गौरव का कारण है।

कुतुबमीनार सन् १३२५ ईसवीमें पूरा हुआ। इससे मालूम होता है कि, यह इमारत लगभग छै सौ वर्षसे दिल्लीकी राज्य-क्रान्तियों और उथला-पथलोंका अवलोकन कर रही है। अतएव इस इतिहासप्रसिद्ध इमारतको देखकर प्रत्येक मनुष्यको, उसके विषयमें, अभिमान और आदरभाव मालूम होता है।

कुतुबमीनारकी अत्युच्च इमारत पर खड़े होकर, आसपास दृष्टि डालने से, दस कोस विस्तारवाले प्राचीन दिल्ली शहरकी सैकड़ों विध्वंसित इमारतें दृष्टिगोचर होती हैं, जिनको देखनेसे यह मालूम होता

है कि, मानो यह कुतुबमीनार, यह दिखलानेके लिए, कि देखो मैं कैसा सबमें श्रेष्ठ हूँ, बड़ी शानके साथ खड़ा है ! उसकी विशाल रचना, उसकी सुन्दर नक्काशी, उसका भव्य स्वरूप, और उसकी कायदेकी उँचाई, देखकर दर्शकोंको आनन्द और आश्चर्य हुए बिना नहीं रहता। सारे संसारकी कबरोंमें जिस तरह आगरेका ताज-महल श्रेष्ठ है, उसी प्रकार सारे मीनारोंमें दिल्लीका कुतुबमीनार श्रेष्ठ है। जिस तरह ताजमहलका अप्रतिम सौन्दर्य्य देखकर रसिक दर्शकोंको अत्यन्त हर्ष होता है; और आश्चर्यके कारण वे यह नहीं सोच सकते कि, "ताजमहल हृदयमें रखें, अथवा हृदय ही ताज-महलमें रख दें"—बस यही हाल यहाँ भी दर्शकोंका होता है। कुतुबमीनारकी इमारत एक बार देख लेने पर फिर हमें कभी उसका विस्मरण नहीं हो सकता। मतलब यह है कि, यह इमारत संसार में एक अपूर्व वस्तु है। पेरिसका 'एफेल टावर' नामक मीनार लोहेका है, अतएव उसकी बात हम नहीं कहते; किन्तु अलेक्जेन्ड्रि-याका पाम्पीका जयस्तम्भ, केरोकी हसनकी मसजिदका मीनार, अथवा सेंटपीटर्सबर्ग का 'अलेक्जेन्ड्राइन कालम' इत्यादि सब अत्यन्त ऊँची ऊँची इमारतोंको कुतुबमीनारके आगे अपना मस्तक झुकाना पड़ेगा।

यह मीनार यद्यपि इतना ऊँचा है, तथापि उसके भीतरका जीना बहुत अच्छा है। पाँचों खंडोंमें सब मिलाकर कुल ३७६ सीढ़ियाँ हैं। भीतरकी ओर वायु और प्रकाशकी यथायोग्य सुविधा है; और प्रत्येक खंड पर गैलरियाँ बनी हुई हैं, अतएव दर्शकोंको बड़ा आराम रहता है। प्रत्येक खंड पर गैलरी होनेके कारण ऐसा जान

पड़ता है कि, मानों इस इमारतमें ठौर ठौर पर कमरबन्द कसे हैं। इससे इमारतको विशेष शोभा प्राप्त हुई है। इसके अतिरिक्त इस इमारत पर अनेक शिल्प-लेख भी हैं, जिनमें कुरानके वाक्य और परमेश्वरकी नाम-मालिका दी हुई है। इससे इमारतके बनानेवालों की ईश्वरभक्तिका अच्छा परिचय मिलता है।

कुतुबुद्दीनकी मसजिद

कुतुबमीनारके पास कुतुबुद्दीन बादशाहकी बनवाई हुई एक पुरानी मसजिद है। यह मसजिद उस समयका बिलकुल पहला स्मारक है, जब कि मुसलमानी धर्म्मका भारतवर्षमें प्रवेश हुआ। यह मसजिद, तथा इसके आसपासकी इमारतें, कुतुबुद्दीन, शमसुद्दीन अलतमश और अलाउद्दीन खिलजी नामक तीन बादशाहोंके शासन-कालमें बनाई गई हैं। कुतुबुद्दीनकी मसजिदका नाम 'कुवत-उल्-इसलाम' है, जिसका अर्थ "इस्लाम धर्म्मकी शक्ति" है। इस मसजिदकी लम्बाई १५० फुट और चौड़ाई ७५ फुट है। इसके पूर्व और उत्तरके दरवाजे अभी तक मौजूद हैं; और उनके शिला-लेख स्पष्ट दिखाई देते हैं। यह इमारत, हिन्दू तथा जैनमन्दिरोंको तोड़कर, उन्हींकी सामग्रीसे बनाई गई है। इसलिए यह स्पष्ट जान पड़ता है कि, इसके प्रत्येक खम्भे पर जो नक्काशी है, वह हिन्दुओंकी है। इन खम्भोंके बेलबूटे, पुष्प-मालाएँ, और नाना प्रकारकी सुन्दर आकृतियाँ देखने लायक हैं। विशेषतः इस मसजिदके उत्तरकी ओरकी दालान में बहुत ही बढ़िया नक्काशी की हुई है। इस सम्पूर्ण हिन्दू-शिल्पकार्य के वर्तमान स्वरूप को देखकर अत्यन्त खेद होता है।

इस सम्पूर्ण इमारत को एक बार देखने से ऐसा भास होता है कि, इसके सब खम्भे और बेलबूटेदार पत्थर, जो पहले हिन्दू मन्दिरों में रामकृष्ण का भजन-पूजन देखते हुए आनन्द से वास करते थे, वे यहाँ पर अत्याचारपूर्व्वक लाये जाने तथा मुसलमानी धर्म्म की दीक्षा दिये जाने के कारण, मानो शोक सा कर रहे हैं! हिन्दुओं तथा जैनियों की मूर्त्तियां इस इमारत में न देख पड़ें—इसलिए उन पर चूने का बढ़िया मुलम्मा चढ़ाकर उनका स्वरूप बिलकुल बदल दिया गया था; परन्तु काल-गति से वह चूने का पलास्तर जीर्ण हो गया; और वे अदृश्य मूर्त्तियां अब धीरे धीरे दिखाई देने लगी हैं! यहाँ पर यह बात ध्यान में रखनी चाहिये कि हिन्दुओं की मूर्तियों पर आये हुए पटल कालान्तर से आप ही आप नष्ट हो गये; और उनका पहले का स्वरूप व्यक्त हो गया! क्योंकि, हमारे हिन्दू धर्म्म का यह विशेष गुण ही है कि, उस पर चाहे जितने सङ्कट आवें, पर-धर्म्म के कितने ही पटल उस पर आकर क्यों न जम जायँ, तथापि उसका असली उज्वल स्वरूप कभी नष्ट नहीं हो सकता। इसी अद्वितीय गुण के कारण, हमारा हिन्दू धर्म्म, मुसलमानों के धर्मोन्माद की कुछ भी परवा न करते हुए, बराबर टिका रहा। अस्तु। इस मसजिद में एक स्थान पर कृष्णजन्म का भी एक चित्र है; और एक सवत्सा धेनु का चित्र है। ये दोनों चित्र भी देखने लायक हैं।

इस मसजिद के प्रति मुसलमानों का पहले ही से बड़ा पूज्य-भाव है। कई मुसलमान इतिहासकारों और प्रवासियों ने इसका वर्णन किया है; और उसमें यह भी स्पष्टतापूर्व्वक स्वीकार किया है कि,
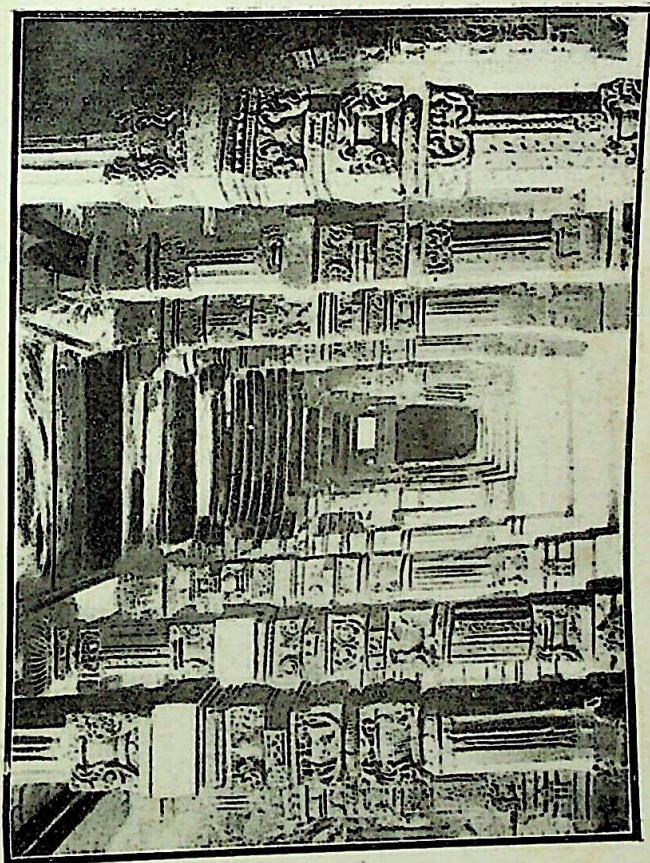
जैन-मन्दिर ।

यहाँ पर पहले हिन्दुओं का देवालय था। इब्नबतूटा नामक प्रवासी ने इसके विषय में यह लिखा है:—

"Its mosque is very large, and in beauty and extent has no equal. Before the taking of Delhi it had been a Hindu Temple."

अर्थात् "यह मसजिद बहुत बड़ी है; और सौन्दर्य तथा विस्तार में अपना सानी नहीं रखती। दिल्ली के हस्तगत करने के पहले यहाँ हिन्दुओं का मन्दिर था।"

खुसरो कवि ने इस मसजिद का इस प्रकार वर्णन किया है:—

"The mosque of it is the despository of the grace of God.
The music of the prayer of it reaches to the sky.

अर्थात् मसजिद क्या है, परमात्मा के अनुग्रह का निवासस्थान है। यहां की प्रार्थना स्वर्ग तक जाती है।

अस्तु। इस स्थानके पास सुलतान शमशुद्दीन अल्तमशकी कबर है। वह बड़ी सुन्दर है; और उसका प्राचीन हिन्दू-शिल्पकार्य अत्यन्त दर्शनीय है। इसके विषय में मि० फर्ग्युसनने लिखा है कि, "यह इमारत यद्यपि छोटी है, तथापि हिन्दू कारीगरोंके कौशल का यह अप्रतिम नमूना है, और प्राचीन दिल्लीकी दर्शनीय इमारतोंमें भी यह अग्रगण्य है।" इस कब्रके अतिरिक्त यहाँ 'अलाई दरवाजा' नामक एक सुन्दर दरवाजा भी है, जिसकी नक्काशी अत्यन्त प्रशंसनीय है। कुतुब मीनार, कुतुबुद्दीनकी मसजिद, अल्तमशकी कबर और अलाई दरवाजा, ये सब इमारतें पठान राजाओंके

समय की हैं; और निस्सन्देह प्रशंनीय हैं। बिशप हीबर नामक कुतूहलप्रिय प्रवासी ने पठानों की उपर्युक्त इमारतोंको देखकर कहा है कि, "इन पठान राजाओं ने राक्षस के समान इमारतें बनाई हैं; और उनकी नक्काशी रत्नकारके समान सुन्दरकी है।" यह कथन यहाँ अक्षरशः सत्य प्रतीत होता है।

उपर्युक्त इमारतोंके अतिरिक्त दिल्लीमें फीरोजाबाद, तुगलकाबाद, बेगमपुर, आदि अनेक प्राचीन और इतिहास-प्रसिद्ध स्थान हैं। वहाँपर भी मसजिदें और कब्रें वहुत हैं। इनके सिवाय, सन् १८५७ के बलवेमें जिन अँग्रेज वीरोंने शूरता दिखलाकर रणभूमिमें अपने प्राण दिये, उनकी कब्रें, स्मारक-स्तम्भ, इत्यादि अनेक अर्वाचीन बातें भी देखने योग्य हैं। इन सभीका वर्णन इस छोटी सी पुस्तकमें नहीं दिया जा सकता। तथापि, ये सभी स्थल दिल्ली जानेवाले दर्शकों के देखने योग्य हैं।

अस्तु। इसमें सन्देह नहीं कि, दिल्ली अथवा इन्द्रप्रस्थका यह पुराण-प्रसिद्ध और इतिहास-प्रसिद्ध स्थल देखकर यह अच्छी तरह मालूम हो जाता है कि, काल-चक्र की गति कितनी विचित्र है। जहाँ हिन्दू राजाओंकी स्वतन्त्रता और राज्यसत्ता चमक रही थी, वहाँ काल-चक्रकी गतिसे मुसलमानोंका राज्य आया; बादको जब मुसलमानी राज्यसत्ताका वैभव भी अपनी चरम सीमा तक पहुँच चुका, तब मराठोंका प्रभुत्व प्रस्थापित हुआ। इसके बाद मराठोंकी सत्ता भी न रही; और ब्रिटिश राज्यसत्ता यहाँ आकर संस्थापित हुई! इससे साफ मालूम होता है कि राष्ट्रके उत्थान और पतनका चक्र बराबर जारी है! जो हो, दिल्ली अथवा

इन्द्रप्रस्थ नगरका जब हम ऐतिहासिक दृष्टिसे अवलोकन करते हैं तब हमें कविकुलगुरु कालिदासके इस कथनकी सत्यता भली भांति प्रतीत हो जाती है कि:—

" नीचैर्गच्छत्युपरि च दशा चक्रनेमिक्रमेण। "

एक प्राचीन अंगल कविने भी राष्ट्रों के उत्थान और पतनके विषयमें ऐसा ही कहा है। वह कहता है:—

"Empires and nations flourish and decay,
By turns command and in their turns obey."

अर्थात् "संसारका नियम है कि, बारी बारीसे सब राष्ट्रों और सम्राज्योंका उत्थान तथा पतन होता रहता है। क्रमशः वे दूसरों पर शासन करते, और फिर दूसरोंका शासन माननेके लिए बाध्य होते हैं !"

अस्तु। अँगरेजी राज्यमें भी हमारी इस वृद्धा दिल्ली माताने पूरा पूरा गौरव प्राप्त किया है। महारानी विक्टोरिया और महाराज सप्तम एडवर्डके राज्यारोहण-सम्बन्धी महोत्सव इस दिल्लीमें ही बड़ी धूमधामसे सुसम्पन्न हुए। बादको सन् १९१२ ई० में सम्राट पंचम जार्ज ने स्वयं इस पवित्र भूमिमें पधारकर, इसे फिरसे इसका गौरवपूर्ण राजधानी-पद प्रदान किया; और अपने राज्यारोहणका अपूर्व उत्सव यहाँ सुशोभित कराके भारतवासियोंको आनन्दित किया। तबसे दिल्ली राजधानीका राजनैतिक महत्व, वर्तमान समयमें भी, दिन पर दिन बढ़ ही रहा है; और अब तो हमारी गवर्नमेंट की ओर से भी एक 'नवीन दिल्ली' बसाई गई है। आशा है कि, स्वातंत्र्यप्रिय ब्रिटिश साम्राज्यके द्वारा, दिल्ली राजधानीको एक बार फिर स्वराज्य शासनका गौरव प्राप्त होगा !

परिशिष्ट (क)

दिल्लीके प्राचीन राजा

राजाका नाम		शासनकी अवधि		
		वर्ष	मास	दिन
१ राजा युधिष्ठिर	...	३३	८	२५
२ राजा परीक्षित	...	६०	१	०
३ राजा जन्मेजय	...	४८	५	२७
४ राजा अश्वमेध	...	८२	८	२४
५ राजा धर्म	...	८८	२	८
६ राजा मनजित	...	८१	११	२४
७ राजा जसरथ	...	७५	८	८
८ राजा दीपपाल	...	७५	१०	१८
९ राजा उग्रसेन	...	७७	७	२४
१० राजा सूरसेन	...	७९	८	६
११ राजा भूपति	...	६१	५	२
१२ राजा रणजित	...	६५	१०	२९
१३ राजा वीरजित	...	६४	७	३
१४ राजा भीमसेन	...	५५	८	२९
१५ राजा शुक्रमलदेव	...	६२	०	३

राजाका नाम		वर्ष	मास	दिन
१६ राजा नरहरिदेव	...	६१	१०	४
१७ राजा सुजितरथ	...	७२	११	३
१८ राजा शूर	...	५८	०	८
१९ राजा पर्वत	...	५०	८	२१
२० राजा मधुकरशाह	...	५२	४	७
२१ राजा टोडरमल	...	४८	१०	२९
२२ राजा भीष्मदेव	...	४७	१०	२९
२३ राजा नरहरिरथ	...	४७	११	०
२४ राजा पूर्णमल	...	४४	८	१७
२५ राजा सारंगदेव	...	५६	०	०
२६ राजा रूप	...	५४	१०	२
२७ राजा अभिमन्यु	...	५१	११	८
२८ राजा धनपाल	...	४८	७	४
२९ राजा भीम	...	५८	५	१५
३० राजा लखमी देव	...	४८	११	२१
	कुल योग	१८५३	११	×

इसके बाद लखमीदेवके प्रधान वीरसेनने लखमीदेवको मारकर राज्य ले लिया। उसके वंशजः—

१ राजा वीरसेन	...	१७	७	०
२ राजा सूरसेन	...	३२	८	०

राजाका नाम		वर्ष	मास	दिन
३ राजा अनन्तशाह	...	३७	८	२३
४ राजा वीरशाह	...	३२	१०	७
५ राजा हरिरूप	...	३५	६	१७
६ राजा सुलोचन	...	४३	१	४
७ राजा पर्वत	...	४२	६	२४
८ राजा सुरपाल	...	३८	२	५
९ राजा कूप	..	३५	४	१४
१० राजा पृथ्वीपाल	...	३१	८	११
	कुल योग	३४७	६	२६

इसके वाद पृथ्वीपालके मंत्री नरहरिनाथने पृथ्वीपालको मारकर राज्य ले लिया। उसके वंशज :—

१ राजा नरहरिनाथ	...	१५	१०	८
२ राजा जेतसिंह	...	२७	७	१५
३ राजा वैरामगत	...	२१	२	१३
४ राजा दीपपाल	...	३५	४	१
५ राजा महाबल	...	३५	८	७
६ राजा अमृतपाल	...	२८	८	१०
७ राजा जेतपाल	...	२८	११	१०
८ राजा माणिकचन्द	...	२६	७	२१
९ राजा कामचन्द	...	३२	५	१०
१० राजा [illegible]	...	१७	०	११

परिशिष्ट (क)

राजाका नाम		वर्ष	मास	दिन
११ राजा जीवनगौण	...	२३	९	२७
१२ राजा रभ्यवंग	...	१३	७	२९
१३ राजा त्रिविक्रम	...	१०	२	१०
१४ राजा भारमल	...	२३	११	२४
१५ राजा भूपति	...	१०	२	२
१६ राजा उदितकंठ	...	३५	२	२०
कुल योग		३८९	६	८

इसके बाद उदितकंठके 'मंत्री' ने उसको मारकर राज्य ले लिया।

उसके वंशजः—

राजाका नाम		वर्ष	मास	दिन
१ राजा मंत्री (?)	...	२४	२	०
२ राजा चन्द्रपाल	...	१६	९	२४
३ राजा सुन्दरपाल	...	२१	४	१८
४ राजा देशपाल	...	१९	१	११
५ राजा रसिकपाल	...	१८	०	१२
६ राजा अनन्तपाल	...	१८	०	२२
७ राजा रामपाल	...	३७	११	१२
८ राजा गोविंदपाल	...	२८	७	२७
९ राजा भीमपाल	...	१६	१०	१३
१० राजा अमृतपाल	...	१६	७	१९
११ राजा हलपाल	...	१२	५	२७
१२ राजा भूपाल		१४	९	२२

राजाका नाम		वर्ष	मास	दिन
१३ राजा हरिपाल	...	१३	८	४
१४ राजा मदनपाल	...	१७	७	१६
१५ राजा कर्णपाल	...	१५	२	२५
१६ राजा विक्रमपाल	...	१८	११	१३
	कुल योग	३११	५	८

राजा विक्रमपालको उसके वजीर सआदतखांने मारकर राज्य छीन लिया।

इसके बाद दिल्लीमें बड़ी गड़बड़ी मची। फिर सोलह पुरुषोंने राज्य किया। उनके नामः—

१ सआदतखां	...	२४	०	०
(इस सआदतखांको मार विक्रमाजितने राज्य ले लिया।)				
२ विक्रमाजित	...	३३	०	०
३ मुल्लकचन्द	...	०	२	२
४ विक्रमचन्द	...	१२	७	१८
५ कुलचन्द	...	०	२	२
६ रामचन्द	...	१३	११	७
७ कल्याणचन्द	...	१०	५	४
८ श्रीचन्द	...	१४	८	१४
९ सूरचन्द	...	२६	३	२१
१० भीमचन्द	...	१६	३	१
११ गोविन्दचन्द	...	२१	७	१२

परिशिष्ट (क)

राजाका नाम		वर्ष	मास	दिन
१२ भावति	...	१	०	०
१३ प्रतिमल	...	७	५	१४
१४ गोविन्द	...	२०	२	१७
१५ पूर्णप्रेम	...	७	७	१९
१६ महानन्द	...	१५	७	१८
	कुल योग	२२५	३	५

इसके बाद निम्नलिखित बारह राजाओं ने राज्य किया:—

		वर्ष	मास	दिन
१ राजा जयसिंह	...	१८	५	२१
२ राजा मालुसेन	...	१२	४	१२
३ राजा शूरसेन	...	१५	७	१२
४ राजा गन्धर्वसेन	...	११	३	१३
५ राजा देवसेन	...	१०	१	५
६ राजा भूसेन	...	५	१०	५
७ राजा कल्याणसेन	...	४	८	२१
८ राजा हरिसेन	...	१२	०	२५
९ राजा ब्रह्मसेन	...	८	११	५
१० राजा नारायणसेन	...	५	२	१८
११ राजा लखमीसेन	...	१६	७	१५
१२ राजा दामोदरसेन	...	११	५	१६
	कुल योग	१३२	८	१८

इसके बाद माधवसिंह उत्तर ओर से आया; और उसने दामोदरको मारकर उसका राज्य ले लिया। उसके वंशज:—

राजाका नाम		वर्ष	मास	दिन
१ राजा माधवसिंह	...	१७	१०	६
२ राजा दीलसेन	...	१४	५	०
३ राजा राजसिंह	...	१२	३	२४
४ राजा शेरसिंह	...	१०	८	११
५ राजा वीरसिंह	...	२५	०	१५
६ राजा नृपसिंह	...	८	०	४
	कुल योग	८८	४	०

इसके बाद नृपसिंहको राजा धीरन्धरने मारकर राज्य ले लिया। उसके वंशज:—

राजाका नाम		वर्ष	मास	दिन
१ राजा धीरन्धर	...	२२	७	०
२ राजा सेन	...	३५	१०	६
३ राजा लालजी	...	३५	२	८
४ राजा महानु	...	२०	३	६
५ राजा बीरनाथ	...	२८	५	२५
६ राजा जीवन	...	२२	२	२५
७ राजा उदयसिंह	...	२७	४	२६
८ राजा कुलानन्द	...	२२	३	८
९ राजा राजपाल	...	१३	२	६
	कुल योग	२२७	५	२९

इसके बाद पृथ्वीपाल पूर्व ओरसे आया, और उसने राजपालका मारकर राज्य ले लिया। उसके वंशजः—

राजाका नाम	वर्ष	मास	दिन
१ राजा पृथ्वीपाल ...	१४	७	१७
२ राजा उजनपाल ...	१२	७	१३
३ राजा उदयपाल ...	१३	७	१४
४ राजा चैनपाल ...	१८	२	१८
५ राय पिथौरा उर्फ पृथ्वीराज चौहान	३६	४	२५
कुल योग	६५	४	२८

परिशिष्ट (ख)

दिल्लीके बादशाह

गोरी घराना

१ शहाबुद्दीन मुहम्मद ई० स० ११८६–१२०६

गुलाम घराना ।

२ कुतुबुद्दीन ... ,, १२०६–१२१०
३ शमसुद्दीन अल्तमश ... ,, १२१०–१२३५
४ सुलताना रजिया ... ,, १२३६–१२३९
५ मोहज़ुद्दीन बहराम ... ,, १२३९–१२४१
६ अलाउद्दीन मसऊद ... ,, १२४१–१२४२
७ नासिरुद्दीन महमूद ... ,, १८४३–१२६६
८ बल्बन ... ,, १२६६–१२८६
९ कैकुबाद ... ,, १२८६–१२८८

खिलजी घराना

१० जलालुद्दीन ... ,, १२८९–१२९५
११ अलाउद्दीन ... ,, १२९६–१३१६
१२ मुबारिक ... ,, १३१६–१३२०

तुगलक घराना

१३ गयासुद्दीन ... ,, १३२०–१३२६

१४ मुहम्मद	...	„	१३२६–१३५१
१५ फीरोजशाह	...	„	१३५१–१३८८
१६ गयासुद्दीन (दूसरा)	...	„	१३८८–१३८९
१७ अबू बकर	...	„	१३८९–१३९०
१८ मुहम्मद	...	„	१३९०–१३९४
१९ हुमायूँ	...	„	१३९४–
२० महमूद	...	„	१३९४–१४१४

सैयद घराना

२१ खिजरखां (तैमूरलंग का दीवान)		„	१४१४–१४२७
२२ मुबारिक	...	„	१४२७–१४३५
२३ मुहम्मद	...	„	१४३५–१४४५
२४ अलाउद्दीन	...	„	१४४५–१४५०

लोदी घराना

२५ बहलोलखां	...	„	१४५०–१४८८
२६ सिकन्दर		„	१४८८–१५१७
२७ इब्राहीम	...	„	१५१७–१५२५

मुगल घराना

२८ बाबर	...	„	१५२६–१५३०
२९ हुमायूँ	... {	„	१५३०–१५४०
		फिर	१५५५–१५५६
३० अकबर	...	„	१५५६–१६०५
३१ जहाँगीर	...	„	१६०५–१६२७
३२ शाहजहाँ	...	„	१६२७–१६५८

३३ औरंगजेब ... ,, १६५८–१७०७
३४ बहादुरशाह ... ,, १७०७–१७१२
३५ जहाँदारशाह ... ,, १७१२–१७१३
३६ फरुखशियर ... ,, १७१३–१७१९
३७ मुहम्मदशाह ... ,, १७१९–१७४८
३८ अहमदशाह ... ,, १७४८–१७५४
३९ आलमगीर (दूसरा) ... ,, १७५४–१७५९
४० शाह आलम ... ,, १७५९–१८०६
४१ अकबरशाह ... ,, १८०६–१८३७
४२ बहादुरशाह ... ,, १८३७–१८५७

तरुण-भारत-ग्रन्थावली

[सम्पादक पं० लक्ष्मीधर वाजपेयी]

स्थायी ग्राहक बनने के नियम

१—इतिहास, जीवनचरित्र सदाचार और नीति, विज्ञान, कविता, आख्यायिका, सुरुचिपूर्ण नाटक, उपन्यास, इत्यादि विषयों के उत्तमोत्तम ग्रन्थ सुलभ मूल्य पर प्रकाशित करना इस ग्रन्थावली का मुख्य उद्देश्य है।

२—आठ आना प्रवेशफीस भेजकर सब लोग इसके स्थायी ग्राहक बन सकते हैं।

३—स्थायी ग्राहकों को ग्रन्थावली के सब अगले और पिछले ग्रन्थ पौनी कीमत पर, यानी एक-चौथाई कमीशन काटकर, दिये जाते हैं। वे ग्रन्थावली के प्रत्येक ग्रन्थ की चाहे जितनी प्रतियां, चाहे जितनी बार, पौने मूल्य पर ही प्राप्त कर सकते हैं।

४—कोई भी नवीन ग्रन्थ निकलने पर दस-बारह दिन पहले उसका वी० पी० भेजने की सूचना स्थायी ग्राहकों को दे दी जाती है। ग्राहकों को वी० पी० वापस नहीं करना चाहिए; क्योंकि इससे कार्यालय को व्यर्थ की हानि उठानी पड़ती है।

५—जिन ग्राहकों का वी० पी० तीन बार लगातार वापस आता है, उनका नाम स्थायी ग्राहकों से अलग कर दिया जाता है।

६—प्रत्येक मातृभाषा-हितैषी का परम पवित्र कर्त्तव्य है कि इस ग्रन्थावली के स्थायी ग्राहक बनकर हमारे इस शुभ कार्य में सहायता करे। क्योंकि हमारा उद्देश्य केवल पुस्तकों का व्यापार ही नहीं है; बल्कि हिन्दी-साहित्य में सुरुचिपूर्ण ग्रन्थों का विस्तार करना हमारा मुख्य लक्ष्य है। हिन्दी-साहित्य की आवश्यकता को ही देखकर हम ग्रन्थों का चुनाव करते हैं।

—व्यवस्थापक

तरुण-भारत-ग्रन्थावली-कार्यालय, दारागंज, प्रयाग

ग्रन्थों का परिचय

१—अपना सुधार

[लेखक पं० नर्मदाप्रसाद जी मिश्र बी० ए० विशारद]

इस पुस्तक में क्रमशः मनुष्य के मन, शरीर और आचरण के सुधार के अनुभवपूर्ण साधन बतलाये गये हैं। निम्नलिखित विषयों पर इस पुस्तक में चर्चा की गई है:—

मानसिक सुधार में—१ पुस्तकावलोकन २ निरीक्षण ३ वर्गीकरण ४ तर्कना ५ तर्कशास्त्र और आत्म-विद्या ६ कल्पनाशक्ति ७ सौन्दर्य-निरीक्षण-शक्ति ८ स्मरणशक्ति ९ लेखन और भाषणशक्ति १० पुस्तकें ११ निज व्यवसायसम्बन्धी पुस्तकें १२ भाषाओं के अध्ययन की विधि।

शारीरिक सुधार में—१ शारीरिक सुधार का महत्त्व २ व्यायाम या कसरत ३ खान-पान ४ हवादार मकान ५ निद्रा ६ स्नान ७ शरीर और मन का सम्बन्ध।

आचरण-सुधार में—१ आचरण सुधार का महत्व २ आचरण और धर्म ३ आज्ञापालन ४ सत्यशीलता ५ उद्योगशीलता ६ सहानुभूति और प्रेम ७ आदर-सत्कार ८ संयम ९ द्रव्योपार्जन १० दृढ़ता या धैर्य ११ पवित्र आचरण १२ स्वाध्याय १३ महात्माओं के चरित्र १४ सत्संगति १५ आत्मालोचन १६ ईश्वर-प्रार्थना।

हिन्दी के अनेक विद्वानों और प्रतिष्ठित पत्रों ने पुस्तक की पूर्ण प्रशंसा की है। आप भी इस पुस्तक को मँगाकर अवश्य पढ़ें। मूल्य केवल ।=) आठ आने।

२—फ्रांस की राज्य-क्रान्ति

[लेखक बाबू प्यारेलाल गुप्त]

अठारहवीं शताब्दी में फ्रांस की प्रजा ने राजाओं और राज-कर्मचारियों के अत्याचारों से पीड़ित होकर एक बड़ी भारी राज्यक्रान्ति की थी, जिसका प्रभाव यूरुप के समस्त देशों पर पड़ा; और वहां स्वतंत्रता की लहर बड़े वेग से बह निकली। बड़े बड़े सम्राटों के आसन डोल गये। उसी राज्यक्रान्ति का यह सुन्दर और विस्तृत इतिहास हमने प्रकाशित किया है। इतिहास होने पर भी इसके लिखने का ढंग इतना सरस है कि एक वार पुस्तक उठाकर फिर छोड़ने को जी नहीं चाहता। इसका रोमाञ्चकारी वृत्तान्त पढ़कर पाठक आश्चर्य-चकित हो जाते हैं। कुछ प्रसिद्ध पत्रों की सम्मतियां देखिये:—

"इतिहास होने पर भी इस पुस्तक के पढ़ने में उपन्यास का सा आनन्द आता है।" "सरस्वती"

"इसमें फ्रांस की उस प्रसिद्ध राज्यक्रान्ति का सजीव इतिहास चित्रित किया गया है, जिसने फ्रांस की बिलकुल काया पलट कर दी थी। पुस्तक हिन्दी का एक आदरणीय साहित्यांश समझा जाने योग्य है।" "प्रताप"

'This is a carefully written book on the history of the French Revolution × × × The description is orderly, and the language chaste and simple. The book will no doubt prove an addition to the historical literature in Hindi. 'माडर्न रिव्यू'

इस पुस्तक को आप अवश्य मँगाकर पढ़िये। आपका ज्ञान बढ़ेगा, और चित्त प्रसन्न होगा। मूल्य १।) रु०।

३—महादेव गोविन्द रानडे

[लेखक—पं० बनारसीदास जी चतुर्वेदी]

चतुर्वेदीजी चरित्रचित्रण में कितने चतुर हैं, सो हिन्दी-संसार भली भाँति जानता है। आप ही ने अँगरेज़ी, मराठी, बँगला, गुजराती, उर्दू, हिन्दी इत्यादि अनेक भाषाओं के ग्रन्थों से मसाला एकत्र करके देशभक्त महात्मा रानडे का यह अपूर्व चरित्र-ग्रन्थ लिखा है। जस्टिस रानडे भारतीय राष्ट्र के उन विधाताओं में थे, जिन्होंने वर्तमान युग के प्रारम्भिक काल में देश की जागृति में अपनी सम्पूर्ण शक्तियों को लगा दिया था। धर्म, समाज, राजनीति, उद्योग-व्यवसाय, इत्यादि कोई भी भारतीय हित का ऐसा विषय नहीं था, जिसमें उन्होंने नवीन जीवन न डाला हो। रानडे का चरित्र भारतीय जागृति का सजीव इतिहास है। इसको पढ़कर हृदय में नवीन जीवन का संचार होता है। ग्रन्थ की कुछ समालोचनाओं का सार यहाँ दिया जाता है :—

"वस्तुगत्या लेखक ने पुस्तक के लिखने में बहुत परिश्रम किया है। लेखनशैली गम्भीर सारगर्भित और प्रभावोत्पादक है। यथावश्यकता लेखक ने अत्युपयोगी श्लोकों को देकर पुस्तक की मनोहरता को द्विगुणित कर दिया है।" "नवजीवन"

"पुस्तक बड़े अच्छे ढंग से लिखी गई है। आरम्भ में जो सम्पादकीय वक्तव्य है, उसमें रानडे के चरित्र की एक तरह पर आलोचना भी हो गई है। अन्त में महात्मा रानडे के कुछ चुने हुए वचन भी दिये गये हैं, जो अमूल्य हैं। महात्मा रानडे का चरित्र न केवल सब के पढ़ने, बल्कि ध्यानपूर्वक मनन करने की चीज़ है। उनकी चरित्र-सम्बन्धिनी जितनी पुस्तकें हिन्दी में

निकल चुकी हैं, प्रस्तुत पुस्तक उनसे बहुत कुछ विशेषता रखती है।" "हिन्दी-केसरी"

"इस सचित्र पुस्तक में पूज्य नेता रानडे महोदय का जीवन बड़ी सजीव भाषा में चित्रित किया गया है; और उनके स्वभाव, गुणों के आदर्श-चित्रण में लेखक ने बड़ी विद्वत्ता से काम लिया है। "प्रताप"

पुस्तक की पृष्ठ-संख्या दो सौ से ऊपर है। टाइटिल पेज रंगीन चित्र से सुशोभित; और मूल्य केवल बारह आने ।।।) है।

४—एब्राहम लिंकन

[लेखक—पं० लक्ष्मीधर वाजपेयी]

"महात्मा लिंकन के गुण अनन्त हैं। उनका चरित्र शिक्षा और उपदेशों की खानि है। उन्होंने एक साधारण मजदूर के घर जन्म लिया था। किसी स्कूल या कालेज में उन्हें शिक्षा भी नहीं मिली थी। जीवन का अधिकांश देहात और खेती तथा मजदूरी के कामों में ही व्यतीत होने के कारण उन्हें अच्छे विद्वानों का संग भी बहुत ही कम मिलता था। परन्तु अपनी दिव्य बुद्धि और विचारशक्ति तथा अनुपम उद्योगशीलता से उन्होंने अपनी इतनी उन्नति की कि अन्त में अमेरिकन राष्ट्र ने उन्हें बड़े आग्रह से अपने देश का स्वामी यानी प्रेसिडेंट या राष्ट्रपति बनाया। यह लिंकन ही का उद्योग और अध्यवसाय था, जिसने हजारों विरोधी शक्तियों को नीचा दिखाकर अन्त में अमेरिका से मनुष्यों के क्रय-विक्रय अर्थात् गुलामी की प्रथा को जड़ से उखाड़ कर फेंक दिया—यद्यपि इसी विरोध में उन्हें अपने प्राण भी खोने पड़े। महात्मा लिंकन का एक एक गुण अनुकरणीय है। उनका चरित्र एक ही बार नहीं, बल्कि बार बार पढ़ने और विचार करने की चीज़ है। प्रस्तुत

पुस्तक में उनके चरित्र की विशेषताएँ जिस आलोचनात्मक पद्धति से दिखाई गई हैं; उसे पढ़ते ही वे मन पर अंकित हो जाती हैं। पुस्तक की भाषा यथेष्ट सरल और स्पष्ट है"— "हिन्दी-केसरी"

"लिंकन वह पुरुष है, जो संसार में अपने दो हाथ और एक मस्तक लेकर आया; और केवल इन्हीं की सहायता से अमेरिका का प्रसिडेंट बना। निर्धन माता-पिता की सन्तान को पढ़ने में कितनी कठिनाइयां होती हैं; और उसका रास्ता कितना कांटों से घिरा होता है—पर लिंकन उस मार्ग पर कैसे बढ़ा; और अन्त में उसे सब से ऊंचा आसन कैसे मिला—यही इस पुस्तक में है। उस ऊंचे आसन पर बैठकर लिंकन ने गुलामी के खिलाफ़ तलवार निकाली; और पांच वर्ष संग्राम करके उसने इसका अन्त किया। उसका यह वाक्य सर्वत्र कहा जाता है कि "यदि गुलामी बुरी नहीं, तो संसार में कुछ भी बुरा नहीं।" ऐसे प्रसिद्ध पुरुष का जीवन-चरित्र पढ़ना प्रत्येक का धर्म है। बालकों को ऊंट-बैल की कहानियां न पढ़ाकर यदि ऐसी पुस्तकें पढ़ाई जायँ, तो भारतवासी अपने आपको पहचान सकते हैं। प्रत्येक पाठक से हमारा अनुरोध है कि वे इसे अवश्य पढ़ें"— "हिन्दी-समाचार"

उपर्युक्त दो समालोचनाओं से अधिक इस पुस्तक की हम प्रशंसा नहीं कर सकते। पुस्तक सचित्र है; और मूल्य ।।=) दस आने है। आप इसे अवश्य मँगाकर पढ़ें।

५—ग्रीस का इतिहास

[लेखक—बा० प्यारेलाल जी गुप्त]

ग्रीस देश के प्रारम्भिक इतिहास से लेकर रोम के शासन-काल तक का इतिहास, प्रसिद्ध प्रसिद्ध ग्रन्थकारों की सूची और उनका समय, ग्रीस की प्राचीन सभ्यता, वहां की धार्मिक, राजनैतिक,

सामाजिक क्रान्तियां, सिकन्दर बादशाह का पराक्रम, इत्यादि सभी बातों का सच्चा सच्चा वृत्तान्त यदि आपको जनना हों तो इस ग्रन्थ को एक बार अवश्य पढ़ जाइये। हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की मध्यमा परीक्षा और प्रयाग-महिला-विद्यापीठ की परीक्षाओं में भी यह ग्रन्थ पढ़ाया जाता है। राष्ट्रीय विद्यालयों के लिए बहुत उपयोगी है। प्रत्येक विद्याप्रेमी को इस ग्रन्थ की एक प्रति मँगाकर अपनी लाइब्रेरी में अवश्य रखनी चाहिए। मूल्य १=) है।

६—रोम का इतिहास

[लेखक—प्रो० ज्वालाप्रसाद जी एम० ए०]

ग्रीस की तरह हमने रोम का इतिहास भी उपर्युक्त प्रोफेसर साहब के द्वारा लिखवाकर प्रकाशित किया है। रोम का इतिहास एक बहुत ही महत्वपूर्ण पुस्तक है। पश्चिमी जगत् में यह रोम के ही साम्राज्य का विकास था, जिसने भिन्न भिन्न दूरदेशस्थ जातियों में एक-सम्बन्ध-सूत्र स्थापित किया; और एक दूसरे को नाना प्रकार के आचार-व्यवहार, विद्या, कलाकौशल, आदि से प्रभावित होने का अवसर दिया। यदि कोई मनुष्य आधुनिक यूरप की भिन्न भिन्न जातियों की सभ्यता, भाषा, शासनपद्धति, आदि को समझना चाहता है, तो उसके लिए यह आवश्यक है कि रोम और ग्रीस के इतिहासों का ध्यानपूर्वक अध्ययन करे; क्योंकि एक बहुत बड़े अंश में इन्हीं दो देशों में उन सब का स्रोत पाया जाता है।

रोम का इतिहास भी साहित्य-सम्मेलन और प्रयाग-महिला-विद्यापीठ की परीक्षाओं में प्रचलित है। इसके प्रत्येक अध्याय के अन्त में परीक्षार्थ प्रश्न भी दे दिये गये हैं, तथा अन्त में रोम के इतिहास की मुख्य मुख्य घटनाएं तथा उनकी सनावली भी दे दी

गई है। कालेजों में जो विद्यार्थी रोम और ग्रीस का इतिहास लेते हैं, वे अपनी मातृभाषा हिन्दी के द्वारा यदि इन दोनों इतिहास-ग्रन्थों को पढ़ लिया करें, तो उनको परीक्षा पास करने में बड़ी सहायता मिल सकती है। पृष्ठसंख्या लगभग पौने दो सौ। मू० ।।।) बारह आने।

७—इटली की स्वाधीनता

[लेखक—पं० नन्दकुमारदेव शर्मा]

स्वर्गीय पं० नन्दकुमारदेव शर्मा इतिहासिक साहित्य के अध्ययन में बड़े पटु थे—इतिहास की कठिन कठिन गुत्थियां सुलझाने में उनको बड़ा आनन्द आता था। उन्होंने इटली की स्वाधीनता का यह इतिहास बहुत खोज के साथ लिखा है। मेजिनी, ग्यारीबाल्डी, केवूर, इत्यादि इटालियन देशभक्तों ने अनेक संकट और कठिनाइयां झेलकर अपनी मातृभूमि इटली को विदेशी अत्याचारी शासन से मुक्त कर के किस प्रकार स्वतंत्र बना दिया—इसका मनोरंजक और उपदेशप्रद इतिहास इस पुस्तक में आपको मिलेगा। इतिहास ही एक ऐसी चीज़ है कि जो हज़ारों वर्ष के पीछे की घटनाओं को एकदम सामने लाकर रख देता है; और विचारशील पुरुषों को उसमें सोचने-विचारने और उचित मार्ग ढूँढ़ने की बहुत कुछ सामग्री रहती है। इसलिए इतिहासिक पुस्तकों का अध्ययन करना प्रत्येक पढ़े-लिखे पुरुष का प्रधान कर्त्तव्य है। इटली की स्वाधीनता का यह इतिहास भी बहुत ही प्रभावशाली, मनोरंजक और उत्साहवर्द्धक है। मूल्य सिर्फ़ ॥) आठ आने।

८—मराठों का उत्कर्ष

[अनु०—श्रीयुत भास्कर रामचन्द्र भालेराव]

यह पुस्तक जस्टिस रानडे के "राइज़ आफ़ मराठा पावर" (Rise of Maratha Power) का अनुवाद है। छत्रपति शिवाजी महाराज ने दक्षिण में यवनों का दमन कर के किस प्रकार हिन्दू राज्य प्रस्थापित किया, हिन्दुओं की बिखरी हुई शक्ति का संगठन करके किस प्रकार उन्होंने अपने अनुकूल क्षेत्र तैयार किया, उस समय देश की राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक दशा कैसी थी, इत्यादि बातों को जानने के लिए इस अनुपम ऐतिहासिक ग्रन्थ का अवश्य अध्ययन करना चाहिए। पुस्तक की विषय-रचना इस प्रकार है :—

१ मराठों के इतिहास का महत्व २ क्षेत्र कैसे तैयार किया गया ३ बीज कैसे बोया गया ४ बीज कैसे अंकुरित हुआ ५ वृक्ष में कोंपल निकलीं ६ वृक्ष में फल आये ७ शिवाजी का राज्यप्रबन्ध ८ महाराष्ट्र के साधु-महात्मा ९ जिंजी १० अशान्ति में शान्ति की स्थापना ११ चौथ और सर-देश-मुखी १२ दक्षिणी भारत में मराठे १३ मराठों के इतिहास की कुछ चुनी हुई बातें १४ पेशवाओं की डायरी से कुछ वृत्तान्त।

इस पुस्तक की समालोचना करते हुए "भगीरथ" ने लिखा है:—

"इस पुस्तक के विचार कैसे सार-गर्भित हैं—यह प्रश्न करने की आवश्यकता नहीं; क्योंकि उस पर न्यायमूर्ति महात्मा रानडे के कलम की छाप है। × × × × ऐसी पुस्तकों के पढ़ने से आत्म-विश्वास का विकास होता है। आजकल के ज़माने में, जब कि संसार में भारत के विरुद्ध साम्राज्यवादी अपना उल्लू सीधा करने के लिए भारतीयता के सम्बन्ध में व्यर्थ के आक्षेप करते

हों, प्रत्येक भारतीय का कर्त्तव्य है कि वह उनसे बचने के लिए ऐसी पुस्तकों का पाठ एवं मनन करे ”— “भगीरथ”

पुस्तक सजिल्द है। टाइटिलपृष्ठ छत्रपति शिवाजी के चित्र से सुभूषित है। पृष्ठ-संख्या ३२९, मूल्य केवल डेढ़ रुपया १॥) है।

६—सचित्र दिल्ली

[लेखक—श्रीयुत रामचन्द्र रघुनाथ सर्वटे]

इतिहासिक दृष्टि से दिल्ली-इन्द्रप्रस्थ का महत्व बहुत बड़ा है। इस नगर ने जितने राजकीय परिवर्त्तन—जितनी राज्यक्रान्तियां—देखी हैं, उतनी शायद ही इस भूमंडल के किसी नगर ने देखी हों। इस नगरी की मिट्टी का एक एक कण चक्रवर्ती सम्राटों की इतिहासिकता से भरा हुआ है। उसीका अत्यन्त प्राचीन काल से लेकर अब तक का सचित्र वृतान्त इस पुस्तक में दिया गया है। कुल सात अध्याय हैं:—

१ प्राचीन और अर्वाचीन वृत्तान्त २ दिल्ली का किला और मुख्य राजप्रासाद ३ दिल्ली की जुम्मा-मसजिद ४ इन्द्रप्रस्थ का महाभारत से वर्णन ५ दिल्ली के आसपास के अन्य स्थानों का वर्णन ६ हिन्दू राजाओं के प्राचीन स्मारक ७ कुतुब-मीनार।

पुस्तक के अन्त में दो परिशिष्टों में सम्राट युधिष्ठिर से लेकर अन्तिम मुसलमान बादशाह बहादुरशाह तक प्रत्येक शासक का नाम और उसके राज्य करने की वर्षगणना भी दी हुई है। दिल्ली के सम्बन्ध में अब तक जितनी इतिहासिक खोज हुई है, सबका इसमें समावेश किया गया है। पुस्तक की भाषा और लेखनशैली साहित्यिक सौन्दर्य से परिपूर्ण होने के कारण इसके पढ़ने में बड़ा आनन्द आता है। “प्रताप” इसकी समालोचना करते हुए इस प्रकार लिखता है:—

"इस पुस्तक में इन्द्रप्रस्थ के प्राचीन इतिहास, इमारतों, किलों इत्यादि का बहुत अच्छा मनोरंजक वर्णन दिया गया है। ऐतिहासिक प्रमाण भी अच्छे दिये गये हैं। इसके वाद "दिल्ली" नामकरण तथा मुसल्मान वादशाहों के समय का सुन्दर वर्णन है। हिन्दी में अन्य भापाओं की तरह ऐतिहासिक स्थानों के सम्बन्ध में बहुत कम पुस्तकें हैं। हमे इस पुस्तक को देखकर इसलिए बड़ी प्रसन्नता हुई है कि हिन्दी में यह एकदम नई वस्तु है।"

"प्रताप"

पुस्तक में दिल्ली के मुख्य मुख्य स्थानों के दस सुन्दर हाफटोन चित्र भी लगाये गये हैं। टाइटिल-पेज, कागज, छपाई, सफाई अत्यन्त मनोरम, मूल्य सिर्फ वारह आने ।||) रखा गया है। आप भी इस पुस्तक की एक कापी मँगाकर अवश्य पढ़ें।

१०—सदाचार और नीति

[लेखक—पं० लक्ष्मीधर वाजपेयी]

पुस्तक का विषय गम्भीर होने पर भी उसका विवेचन इतनी सरल रीति से किया गया है कि आबाल-वृद्ध नर-नारी सबके लिए पुस्तक उपयोगी होगई है। बीच बीच में इतिहास के मनोरंजक दृष्टान्त भी दिये गये हैं। संस्कृत और हिन्दी कवियों की मनोहर विताओं का भी समावेश किया गया है। पुस्तक में निम्नलिखित नौ अध्याय हैं:—

१ सदाचार की आवश्यकता और महत्व २ बालपन और गृह-शिक्षा ३ सदाचार और शिक्षा ४ सदाचार और व्यवहार ५ सदाचार और सत्कार्य ६ आत्म-निरीक्षण ७ आत्म-संयमन ८ सदाचार और श्रद्धा ९ समाज के नियम।

इस पुस्तक की ममालोचना करते हुए "आर्य-मित्र" लिखता है:—

"इस पुस्तक में वाजपेयीजी ने अपनी ओजस्विनी भाषा द्वारा

सदाचार और नीति की मार्मिक मीमांसा की है। पुस्तक जहाँ ज्ञातव्य बातों से पूर्ण है, वहाँ उसके भावों की गम्भीरता और भाषा की अद्भुत छटा भी देखने लायक है। प्रत्येक हिन्दी जाननेवाले को इस महत्वपूर्ण पोथी का अध्ययन कर लाभ उठाना चाहिये।"

'आर्यमित्र"

पुस्तक का काग़ज़, छपाई इत्यादि बहुत उत्तम है। पृष्ठसंख्या १५८, मूल्य केवल ॥=) आने।

११—धर्म-शिक्षा

[लेखक—पं० लक्ष्मीधर वाजपेयी]

हिन्दी भाषा में आर्य-हिन्दू-धर्म की शुद्ध शिक्षा देनेवाला अभी तक कोई ग्रन्थ नहीं था। इसलिए विद्यार्थियों और सर्वसाधारण को स्वधर्म का अध्ययन करने-कराने में बड़ी कठिनाई उपस्थित होती थी। इस कठिनाई को अब हमने दूर कर दिया है। आप हमारी "धर्मशिक्षा" को मँगा लीजिए, फिर आपको बड़े बड़े धर्म-ग्रन्थों को देखने का कष्ट नहीं उठाना पड़ेगा। इस एक ही ग्रन्थ में आर्य-हिन्दू-धर्म की सब बातें आपको मिल जायँगी। श्रुति, स्मृति, पुराण, उपनिषद्, गीता, षड् दर्शन, महाभारत, और अन्य अनेक धर्म-नीति-ग्रन्थों की खूब छानबीन करके यह "धर्मशिक्षा" तैयार की गई है। उपर्युक्त सब धर्म-ग्रन्थों के प्रमाण भी बीच बीच में दे दिये गये हैं। इसलिए पुस्तक की उपयोगिता और भी अधिक बढ़ गई है। हिन्दी, अँगरेजी के सब पत्रों ने और बड़े बड़े विद्वानों ने इस ग्रन्थ की मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। इस ग्रन्थ में निम्नलिखित विषयों पर सप्रमाण निबन्ध लिखे गये हैं:—

१ धर्म २ धृति ३ क्षमा ४ दम ५ अस्तेय ६ शौच ७ इन्द्रियनिग्रह ८ धी या विवेक ९ विद्या या ज्ञान १० सत्य ११ अक्रोध या शान्ति

१२ धर्मग्रन्थ १३ चार वर्ण १४ चार आश्रम १५ पंच महायज्ञ १६ सोलह संस्कार १७ आचार १८ ब्रह्मचर्य या वीर्यरक्षा १९ दान २० तप २१ यज्ञ २२ परोपकार २३ ईश्वर-भक्ति २४ गुरु-भक्ति २५ स्वदेश-भक्ति यानी भारत-वर्ष की महिमा २६ अतिथि-सत्कार २७ प्रायश्चित्त या शुद्धि २८ अहिंसा २९ गोरक्षा ३० ब्राह्म मुहूर्त ३१ स्नान-संध्या ३२ व्यायाम ३३ भोजन ३४ निद्रा ३५ ईश्वर ३६ जीव ३७ सृष्टिरचना ३८ पुनर्जन्म ३९ मोक्ष— इन विषयों का क्रमशः पांच खंडों में धार्मिक विवेचन है; और छठे खंड में सत्संगति, सन्तोष, साधुवृत्ति, दुर्जन, मित्र, बुद्धिमान, पंडित और मूर्ख, एकता, दैव, राजनीति, कूटनीति, साधारण नीति, इत्यादि अनेक विषयों पर चुने हुए सैकड़ों श्लोक अर्थ-सहित दिये हैं, जो कंठाग्र कर लेने से जीवन भर को काम देते हैं।

स्कूल-पाठशालाओं में उच्च श्रेणी के विद्यार्थियों को यह पुस्तक अनेक स्थानों में पढ़ाई जाती है। हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की प्रथमा परीक्षा में भी कोर्स के तौर पर नियत है। आप यदि किसी पाठशाला या स्कूल के संचालक हैं, तो अवश्य इस "धर्म-शिक्षा" को अपने यहां जारी कर दीजिए। एक पोथी मँगाकर देखिये, तो स्वयं आप इसको देखकर मुग्ध हो जायँगे। कुछ आलो-चनाओं का सार यहां दिया जाता है:—

"The very fact that in only about four months time since the publication of the first edition of it another had to be brought out testifies to the value and the immense popularity of this book. It contains beautifully well-written short essays—a sort of lay sermons—on a number of subjects of morality and ethics and as such it makes an excellent text book for students in school. It is in fact written with that aim in view and therefore those interested in

the full development of the moral, the religious and the patriotic instincts in the students should find the book particularly suited for the purpose. The subject, the tenor and the style of the book is in marked contrast to those generally found in the text-books at present, prescribed for use in Government or Government-aided institutions. We earnestly commend the publication to the attention of the members of the text-book committees.—

"सर्चलाइट"

"पंडित लक्ष्मीधर वाजपेयी हिन्दी के पुराने और प्रसिद्ध लेखक हैं। आप हिन्दी-केसरी, हिन्दी-चित्रमयजगत्, आर्यमित्र, आदि कई पत्रों के सम्पादक रह चुके हैं, आपने कितनी ही महत्वपूर्ण पुस्तकें लिखी हैं। हर्ष की बात है कि यह "धर्मशिक्षा" भी वाजपेयीजी की ही ललित लेखनी द्वारा लिखी गई है × × × पुस्तक "धर्मशिक्षा" देने के लिये बहुत उपयोगी है। इसमें एक बात जो खास रखी गई है, वह यह है कि सनातनी तथा आर्यसमाजी दोनों समानरूप से इस पुस्तक-द्वारा लाभ उठा सकते हैं पुस्तक की भाषा परिमार्जित, छपाई सुन्दर और कागज उत्तम है। ऐसी किताबों को स्कूल की धार्मिक शिक्षा में रख देने से बहुत लाभ हो सकता है।"

"आर्यमित्र"

"वाजपेयीजी की इस कृति को बिना किसी हिचकिचाहट के हिन्दूधर्म की कुंजी कह सकते हैं। इसे आप पढ़ें—आपको हिन्दूधर्म की सभी मोटी मोटी बातें, मोतियों की तरह गुँथी मिल जायंगी। विद्यार्थियों के लिए, कोमलमति बालकों के लिए, तो यह अत्यन्त आवश्यक चीज है। हमारी हार्दिक इच्छा है कि हिन्दी-प्रधान प्रदेशों के शिक्षा-विभाग इस—बड़े परिश्रम और खोज से

लिखी हुई—पुस्तक को अपनावें; और प्रान्त के बालकों में इसका
और इसकी अमूल्य शिक्षाओं का प्रचार करें" —"मतवाला"

"अनेक धर्मशास्त्रों का अवलोकन करके पंडितजी ने इसकी
रचना की है; और स्थान स्थान पर प्रमाणस्वरूप श्रुति, स्मृति तथा
पुराणादि ग्रन्थों के श्लोक भी इसमें उद्धृत किये गये हैं। साथ
ही इसमें राष्ट्रीयता का भाव भी परिलक्षित किया गया है। इस
लिये राष्ट्रीय विद्यालयों के विद्यार्थियों के लिये यह विशेष उपयोगी है;
और स्त्री-पुरुष सब के लिए यह समान लाभदायक है"—"वंगवासी"

"× × × इसमें प्रायः मतभेद-रहित धार्मिक विषयों
का बड़ा सुन्दर, सयौक्तिक और हृदयग्राही वर्णन किया गया
है। पुस्तक बड़े काम की और संग्रह करने योग्य है। जगह-जगह
गीता, उपनिषदों और स्मृतियों से प्रमाण भी दिये गये हैं।"
"स्वतन्त्र"

"बहुत दिन से शिक्षा से सम्बन्ध रखनेवाले लोग इस बात की
आवश्यकता अनुभव कर रहे थे कि धार्मिक और नैतिक शिक्षा
देनेवाली पुस्तकों का हिन्दी में प्रणयन हो। × × × इधर
शिक्षा-संस्थाओं में इस विषय के पढ़ाने की ओर विशेष ध्यान
आकृष्ट होने लगा है। ऐसी अवस्था में वाजपेयीजी ने इस पुस्तक
को लिखकर बड़ा अच्छा किया। × × × इस पुस्तक को
सब तरह से उपयोगी बनाने में कोई कसर नहीं रखी गई है। हम
आशा करते हैं कि शिक्षा-संस्थाएं इसे अपने यहां पाठ्यग्रन्थ बना-
कर लेखक का परिश्रम सफल करेंगी।" —"सैनिक"

"The nature of the book is didactic. It deals
with teachings re-a practical moral life. The
author has treated the life of an individual in
society in its various aspects. He has taken pains
to support his statements with copious extracts

from Hindu religious books. The book gives excellent moral teaching to youngmen"— "लीडर"

पुस्तक पौने तीन सौ सफे की है; और मूल्य सर्वसाधारण की सुविधा के लिए सिर्फ १) रु० रखा गया है।

१२--गार्हस्थ्य-शास्त्र

[लेखक—पंडित लक्ष्मीधर वाजपेयी]

यह ग्रन्थ भी हिन्दी भाषा में बिलकुल अपूर्व है। आजकल हमारे देश में स्त्रीशिक्षा का बहुत प्रचार हो रहा है; पर गार्हस्थ्य-शास्त्र की शिक्षा न मिलने के कारण उनकी वह शिक्षा अधूरी ही रह जाती है। इसी न्यूनता की पूर्ति के लिए हमने यह ग्रन्थ तैयार किया है। उच्चश्रेणी की कन्याओं और घर में बहू-बेटियों के लिए यह पुस्तक मानो कल्पवृक्ष है। गृह-प्रबन्ध की कोई भी बात ऐसी नहीं जिसका इसमें वर्णन न हुआ हो। पुस्तक में छै खंड करके निम्नलिखित विषयों का विवेचन किया गया है:—

१ गार्हस्थ्यशास्त्र और स्त्री-शिक्षा २ गृहस्थी का प्रारम्भ ३ घर कैसा हो ४ घर की स्वच्छता ५ वायु का प्रबन्ध ६ शौचकूप और शौचक्रिया ७ स्नान और स्नानागार ८ शयन और शयनागार ९ भंडार-घर १० रसोंई-घर ११ घर की फुलवाड़ी १२ आमदनी और खर्च १३ रुपया कैसे और कहां रखें १४ कपड़े और उनकी व्यवस्था १५ कपड़े धोना १६ कपड़े रँगना १७ फसल पर सामान खरीदना १८ आभूषणों की उपयोगिता और निरुपयोगिता १९ त्योहार उत्सव और धर्मादाय २० यात्रा २१ गृहशोभा का सामान २२ सामान की सफाई २३ बर्तन-भांडे २४ चिराग़बत्ती २५ नौकर-चाकर २६ गाय-भैंस २७ जल का प्रबन्ध २८ भोजन २९ चाय-पानी ३० स्त्रियों के व्यवसाय ३१ सौर का प्रबन्ध ३२ शिशुपालन ३३

रोगी-सेवा ३४ स्त्री-रोग-चिकित्सा ३५ बाल-रोग-चिकित्सा ३६ अन्य रोग
३७ विष और विषैले जन्तु।

पुस्तक की उपयोगिता के विषय में कुछ पत्रों की सम्मतियाँ
देखिये:—

"इस पुस्तक में गृहस्थी-सम्बन्धी सभी उपयोगी विषयों की
चर्चा है। बालिकाओं के पाठ्यक्रम में इसे स्थान मिलना चाहिए। यह
पुस्तक प्रत्येक बालिका और महिला के पढ़ने योग्य है। वाजपेयीजी
का ज्ञान गार्हस्थ्य-शास्त्र के सम्बन्ध में श्लाघ्य है। इसमें ऐसी व्यव-
हारिक बातों का जिक्र है, जिसे सम्भवतः अधिकांश पुरुष-समाज
जानता ही न होगा।"

"प्रताप"

"इस पुस्तक में यह भली भाँति बताया गया है कि गृह-प्रबन्ध
कैसे करना चाहिए। हिन्दी में स्त्री-शिक्षा और गृह-प्रबन्ध-सम्बन्धी
पुस्तकों का बेतरह अभाव है। सुयोग्य ग्रन्थकार ने उक्त अभाव
को इस पुस्तक द्वारा दूर करने का प्रशंसनीय उद्योग किया है।
आशा है, हिन्दी-भाषियों में इसका समुचित आदर होगा।"

"स्वतन्त्र"

"अपने विषय की शायद यह प्रथम पुस्तक है। × × ×
इसमें गृहस्थी के दैनिक काम में आनेवाली बातों को, यथोचित
रीति से, स्पष्टीकरण कर समझाने की चेष्टा की गई है। यह
पुस्तक प्रत्येक गृहस्थ के पास रहनी चाहिए। भाषा सरल है।
लेखक ने इस पुस्तक को हिन्दी-संसार के सामने रखकर उसकी
एक भारी कमी पूरी की है।"

"कर्मवीर"

"अँगरेजी साहित्य में "डोमेस्टिक एकोनोमी" और "डोमेस्टिक
साइंस" पर बहुत साहित्य पाया जाता है; पर वह पश्चिमी समाज
के अनुकूल होने के कारण हमारे घरों के लिए उसका कुछ भी
उपयोग नहीं हो सकता। हमारे लिए तो ऐसा ही "गार्हस्थ्य-
शास्त्र" चाहिए, जो हमारी गृहस्थियों की आवश्यकताओं के अनु-

कूल लिखा गया हो। यह पुस्तक इसी ढङ्ग की है। इसमें छे खंड करके घर के भिन्न भिन्न भागों की व्यवस्था, आय-व्यय इत्यादि के प्रबन्ध की सब बातें, घर के सामान इत्यादि के संग्रह, उसके संरक्षण के उपयोगी उपाय, स्त्रियों के फुरसत के समय के काम, इत्यादि विषयों के भिन्न भिन्न प्रकरणों पर लगभग चालीस निबन्ध दिये गये हैं। पुस्तक के अन्त में बालकों, स्त्रियों और सर्व-साधारण के रोगों पर अनेक सरल घरेलू नुसखे भी दिये गये हैं। प्रत्येक गृहस्थ और गृहिणी को यह पुस्तक मँगाकर अवश्य पढ़नी चाहिए।"

"सैनिक"

"The aim of the writer of this treatise on domestic economy is to give the reader some sound and suitable directions *re.* the numerous needs and duties of house-hold life. The wide range which he has covered shows diligence on his part. The language is simple. The book should prove useful to girls and even grown-up ladies."

—"लीडर"

"गार्हस्थ्यशास्त्र पर संसार की सभी उन्नत भाषाओं में एक से एक बढ़ कर ग्रन्थ हैं। परन्तु हमारे यहां इस विषय की ओर नहीं के बराबर ध्यान दिया गया है। स्त्री-शिक्षा की ओर हमारे समाज ने बहुत कम ध्यान दिया है। हमारी बहनों और बहू-बेटियों में गार्हस्थ्यशास्त्र की अनभिज्ञता के कारण समाज के अनेक गृहस्थ्य जो कष्ट पाते हैं, वह किसीसे छिपा नहीं है। बाजपेयीजी को यह पुस्तक समाज की गृहस्वामिनियों और भावी गृहस्वामिनियों के बड़े मसरफ़ की है। गृहस्थी की छोटी छोटी बातों से लेकर घरेलू नुसखे तक इस पुस्तक में दे दिये गये हैं। पुस्तक प्रत्येक गृहस्थ के घर में रहने लायक़ है"।

"मतवाला"

"We are glad to find this first attempt to write book in Hindi on such an useful subject as domestic economy. *** He (author) covers a wide range of subjects connected with domestic economy which should form a very important subject of study in Girls' Schools in this country. It is a book written in simple Hindi and eminently adapted to the needs and requirements of girls whether in Middle, High or Normal schools or at home. It should also prove useful and of considerable help to even grown up ladies in their successfully discharging the duties of a house-hold life."—
"सर्चलाइट"

घर-गृहस्थी के सम्बन्ध में जानने योग्य सब बातों का इस पुस्तक में बड़ी अच्छी विधि से समावेश किया गया है। भाषा खूब प्राञ्जल और प्रभावपूर्ण है। इस पोथी को कन्याशालाओं, कन्याविद्यालयों के कोर्स में रख देने से बड़ा हित साधन होगा। हम चाहते हैं कि प्रत्येक कुटुम्ब में इस पुस्तक की एक एक प्रति रखी जाय।"
"आर्यमित्र"

"यह गृहस्थों के लिये बड़े काम की है; और इसे पढ़कर वह अपने जीवन को सुधार सकते हैं। गृहस्थ-सम्बंधी सभी विषियों पर इसमें प्रकाश डाला गया है। विशेषतः पढ़ी-लिखी गृह-देवियों के लिये यह बहुत ही उपादेय है; और खासकर उन्हीं के लाभ के लिये सरल भाषा में इसका प्रणयन किया गया है। इसलिए उनको इसका अध्ययन करके अपने गार्हस्थ्य जीवन को सार्थक बनाना परमावश्यक है। × × × इसकी छपाई-सफाई बहुत ही अच्छी है

और प्राय: पौने तीन सौ पृष्ठों में समाप्त हुई है। मूल्य सिर्फ १) रु० है।"

"वंगवासी"

१३—हृदय का कांटा

[लेखिका—श्रीमती कुमारी तेजरानी दीक्षित बी० ए०]

इस सामाजिक उपन्यास की लेखिका एक सुशिक्षित और विदुषी महिला हैं। हिन्दी भाषा में अनेक पुरुषों ने उपन्यास लिखकर नाम पैदा किया है; पर कुमारी तेजरानीजी दीक्षित एक पहली ग्रेजुएट महिला हैं, जिन्होंने यह उपन्यास लिखा है; और खूब लिखा है। इसकी प्रशंसा हिन्दी और अँगरेज़ी के सभी पत्रों ने मुक्तकंठ से की है। कुछ समालोचनाओं का सारांश यहां दिया जाता है:—

"यह एक सामाजिक उपन्यास है। एक ज़मीदार का लड़का महेशचन्द्र, अपनी कुरूपा स्त्री प्रतिभा से विमुख होकर अपनी साली मालती की सौन्दर्य-आग में कूदता है; और फिर उसीके पीछे अपना सर्वस्व खोकर जगह जगह संसार में ठोकरें खाता है, तब कहीं उसे होश आता है; और वह अपनी पतिव्रता पत्नी की विभूतियों पर न्योछावर हो जाता है। बालिका कनक और मालती के चरित्र-चित्रण-द्वारा, वर्त्तमान हिन्दू-समाज में लड़कियों और विधवाओं का क्या हाल है, इस पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। महेश-द्वारा त्यक्त किये जाने पर, मालती के वेश्या हो जाने पर, एक स्वयंसेवक द्वारा उसका उद्धार पाना, देश के स्वयंसेवकों के लिये अनुकरणीय आदर्श है। चरित्र-चित्रण मालती और महेश के समान ही प्रतिभा का भी अच्छा हुआ है। × × × इसमें कोई सन्देह नहीं कि अगर हमारे घरों की महिलाएं प्रतिभा सी वीर पतिपरायण और

कर्मनिष्ठ हों, तो गृहस्थ आश्रम बड़ा ही सुखकर हो जाय × × ×
पुस्तक एक कुमारी की पहली कृति है। इसलिए प्रशंसा और
प्रोत्साहन के लायक है। हम लेखिका महाशय को, इस प्रथम
प्रयास में बहुत कुछ सफलता प्राप्त करने के लिए, बधाई देते हैं; और
आशा करते हैं कि भविष्य में हिन्दी-साहित्य में वे नवीन विचारों से
पूर्ण अपनी सुन्दर कृतियों को लेकर एक महत्व-पूर्ण स्थान प्राप्त
कर लेंगी।" "प्रताप"

"पुस्तक अच्छे ढंग से लिखी गई है। कहीं अश्लीलता नह
आने पाई। घर में बाल-बच्चे सब इसे पढ़ सकते हैं—" "आर्यमित्र"

"हर्ष की बात है कि हिंदी के उपन्यास-क्षेत्र में अब महिला-लेखिका
का भी दर्शन होने लगा। प्रस्तुत उपन्यास उदीयमान लेखिका
कुमारी तेजरानी दीक्षित बी० ए० की पहली कृति है। हिंदू विधवा
प्रलोभनों में पड़कर किस प्रकार पतित होती हैं, इसका इसमें बड़ा
रोमाञ्चकारी चित्र खींचा गया है। × × × पुस्तक उपादेय
है।। पढ़ने में खूब जी लगता है।" "विश्वमित्र"

"हम कुमारीजी के इस प्रथम प्रयत्न का हृदय से स्वागत करते
हैं। उपन्यास रोचक है। चरित्र-चित्रण भी अच्छा है। भाषा
से लेखिका की सहृदयता टपकी पड़ती है। भाषा में कविता और
रचना-सौन्दर्य भी है। × × × उपन्यास-प्रेमियों को एक
बार इसे मँगाकर अवश्य पढ़ना चाहिए।" "अभ्युदय"

"Miss Tej Rani Dikshit is well-known to
nearly all the readers of Hindi magazines as a
short-story writer of eminence and specially as an
authoress of nursery tales and rhymes. She has
now produced a novel "Hridaya-ka-kanta", which
is bound to make a hit with those who are fond of

wholesome fiction. She has dealt with the common theme of the miseries of a Hindu wife, illiterate, and rather plain, but faithful to the end. Widowhood in India is a terrible phenomenon. It has been portrayed effectively. The story is touching and * * * * the achievement is full of promise." "ट्रिब्यून"

"× × × पुस्तक की भाषा सरल, सुरुचिपूर्ण और माधुर्यमय है। इस उपन्यास का आरम्भिक अंश जितना चित्ताकर्षक है, वैसा ही इसका अन्त भी शिक्षाप्रद है। ऐसे मौलिक उपदेशपूर्ण उपन्यासों से हिन्दू-समाज और हिन्दी भाषा का बहुत कुछ उपकार होने की सम्भावना है।" "मतवाला"

"कुमारी तेजरानी के इस उपन्यास में स्वाभाविकता है, सरलता है; और है स्त्री-जीवन का यथार्थ चित्र। × × × × श्रीमती तेजरानी के इस प्रथम प्रयत्न को हम आदर की दृष्टि से देखते हैं—इस लिए की कथानक में स्वाभाविकता है, चरित्रों में शिथिलता नहीं है; और सब से अधिक यह कि स्त्रीजीवन को स्वयं एक कुमारी ने अपनी कलम से चित्रित किया है—" "कर्मवीर"

"In the Hridaya ka kanta" attempt has been made to portray and picture some of the most important aspects of our social life. On one side while it draws our attention prominently to the helplessness of the widows—particularly the girl widows in the Hindu homes—and to the defective character-building of our English-educated youths, on the other it also brings into bold relief the